॥ प्रश्न पत्रिका ॥

॥ श्री जिनाय नमः ॥

॥ दोहा ॥

चरण-कमल जिनराज को, जामें मुज मन लीन ।
मधुकर जिहां गुञ्जत रहै, ज्ञानामृत रस पीन ॥ १ ॥
नाभेयादिक जिनेश्वरा, तीर्थङ्कर चोवीस ।
गणधर पाठक साधु पद, ध्यावत विश्वावीस ॥ २ ॥
जिनवर भाषित शुद्ध नय, आगम-उदधि अपार ।
भमत दूषम कलि काल में, जिन प्रतिमा आधार ॥ ३ ॥
स्वर्ग निवासी देवगण, वलि पाताल कुमार ।
शाश्वत जिन प्रतिमा भणी, नित प्रति करत जुहार ॥ ४ ॥
एहवी प्रतिमा जिन तणी, प्रणमी तेहना पाय ।
पत्र लिखूं अति प्रेम सुं, मुनिवर ना गुण गाय ॥ ५ ॥
क्रोध लोभ मद मोह सबे, त्यागी विषय विकार ।
जीतमल महाराज कूं, नमत सकल नर नार ॥ ६ ॥
दोष बंयालीस टालतें, लेते शुद्ध आहार ।
भविजन कुं प्रतिबोधता, विचरै धरा मजार ॥ ७ ॥

॥ सोरठा ॥

तीन करण थिर धार, जीते बावीस परिसहे ।
जपते दिल नवकार, शुद्ध करि सञ्जम निरवहै ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

सतावीस गुणे करी, पालो निज आचार ।
पञ्च महाव्रत पालता, एहवा तुम अणगार ॥ ९ ॥
निरजित मद उनमाद पणो, वर्जित विषय विकार ।
तर्जित कर्मादिक अशुभ, गर्जित नाण उदार ॥१०॥
शहर लाडनूं अति भलो, विचरो तिहां धर नेह ।
अप्रति बन्ध विहार करी, बैठा सम्बर गेह ॥११॥
तुम गुण गण मकरन्द से, भविजन भ्रमर लोभाय ।
देश विदेशी मानवी, कर जोड़ी गुण गाय ॥१२॥
मैं प्रिण गुण श्रवणे सुणी, भेटण की मन चाय ।
ते दिन सफल गीणिस हूं, वन्दी तुमरा पाय ॥१३॥
कर्म ईंधन कुं जालवा, प्रत्यक्ष अग्नि समान ।
इन्द्रिय पांचु वश करी, एहवा तपकी खान ॥१४॥
गुण सगला तुम अङ्ग सें, दीखत है प्रत्यक्ष ।
आगम अर्थ विचार कि, किम ताणो इक पक्ष ॥१५॥

पक्ष पक्ष कांइ मत करो, ज्ञान दृष्टि मनलाय ।
जिनवर प्रतिमा देखतां, दुःख दोहग टल जाय ॥१६॥
च्यार निक्षेपा जिन कह्या, भाव स्थापना नाम ।
सप्त नय करी देखल्यो, वरणन ठामों ठाम ॥१७॥
अम्बड श्रेणिक राय तिम, रावण प्रमुख अनेक ।
विवध परे भक्ति करी, पाम्या धर्म विवेक ॥१८॥
सप्तम अंगे भाखियो, प्रगट पणें अधिकार ।
सूर्याभे जिन वन्दिया, राय प्रश्रेणी मजार ॥१९॥
विजय देवताये करी, जिन पूजा जिनराज ।
पक्षपात कूं छोड़के, सारो आतम काज ॥२०॥
छठे ज्ञाता अङ्ग में, द्रौपदी पाण्डव नार ।
मन वच काया वश करी, पूज्या जिन दुकतार ॥२१॥
जङ्घा विद्या चारणा, मुनिवर गुणकी खान ।
ते पिण प्रतिमा वन्दता, पञ्चम अङ्ग वखान ॥२२॥
जिन प्रतिमा जिन सारखी, भाखी श्री महावीर ।
कोई शङ्का मत आणज्यो, जिम पामो भव तीर ॥२३॥
जिनवर मत स्याद्वाद है, मत जाणो करी एक ।
दया दान मन धारल्यो, जद आवे विवेक ॥२४॥
जीव दया पाल्यां थकां, निश्चै होय उपगार ।
दया धर्म को मूल है, एहवो आगम सार ॥२५॥

घातः करन्ता जीव को, छोडावे कोई जाय।
अभय दान तेहने कह्यो, आगम में जिनराय ॥२६॥
ज्यो न छुडावो जीव कूं, तो अनुकम्पा नांय।
अनुकम्पा विन जीवको, समकित पुष्टि न थाय ॥२७॥
गोशालो जलता थकां, जिनजी दियो विचार।
सीतल लेश्याये करी, तेजु लेश्या वार ॥२८॥
ज्याने कहता चूकिया, ते तो मिथ्या वात।
कल्पातीत स्वभाव है, तीन लोक के नाथ ॥२९॥
नेम कुंवर तोरण चढ्यां, देखी जीव विनाश।
अनुकम्पा मन लायके, छोड़ाई प्रभु पास ॥३०॥
आप बड़े अणगार हो, पिण ये मोटी खोट।
ज्यो नवि जीव दया करो, बंधे पाप शिर पोट ॥३१॥
पञ्च अधिक चालीस तो, कह्या सूत्र जिनराय।
द्वातिंस तुम मानता, कुण हेतु के न्याय ॥३२॥
भाख्या नहि सूत्र मे सहु, आगम के नाम।
ते वत्तीसां बीच है, देखो चित करी ठाम ॥३३॥
सांचा वत्तीस मानता, और न मानो सांच।
के कोई प्रगट्यो ज्ञान तुम, अथवा मनकी खांच ॥३४॥
सत्य परुपणा ज्यो करो, तो मानो महाराज।
गहन अर्थ आगम तणा, भाख्या श्री जिनराज ॥३५॥

मुखपती मुखं बांधता, कौन सूत्र अनुसार।
मन को भ्रमता मिटो नहिं, ऐर विषम प्रकार ॥३६॥
श्लेस्मा के संजोग सुं, उपजत जीव असंख्य।
जीव सम्मूर्छिम इन्द्रियन, यामे नहिं को. वंक ॥३७॥
गणधर गौतम स्वाम कूं, मिया देवी कह्यो एम।
मुख बांधो वस्त्रे करी, गन्ध न आवे जेम ॥३८॥
ज्यो पहलां बंधी हुन्ती, वलि बंधन किम होय।
एह व्यतिकर तुम जाणजो, सूत्र विपाकि जोय ॥३९॥
जम्भा छिंका कारणे, मुख ढांके मुनिराय।
दशवैकालिक सूत्र में, देखो मन चितलाय ॥४०॥
सूत्र सबे तुम देखल्यो, बंधण का नहिं पाठ।
भगवती ज्ञाता आदि में, साख सूत्र की आठ ॥४१॥
इत्यादिक सूत्रां तणा, मानो नहीं वचन्न।
आप मते नहीं मानता, करल्यो लाख जतन्न ॥४२॥
लिख्या अजमीगंज शहर सुं, पत्र अधिक उच्छरङ्ग।
खमत खामणा मानज्यो, करि तीन करण इक संग ॥४३॥
मुनि गुण अति मुज अल्प धी, कैसे लिखूं बणाय।
जैसे जल सब उदधि को, घट बिच नहिं समाय ॥४४॥
कुशल खेम वरते तिहां, धर्म थकी जयकार।
दूजो पिण सुगुरु पयास थी, आणन्द हरष अपार ॥४५॥

भक्ति पत्र भावे लिख्यो, धरज्यो चित अधिकाय।
अधिको ओछो ज्यो हुवै, ते खमज्यो मुनिराय ॥४६॥
लिखज्यो उत्तर एहनो, मत धरज्यो मन रीस।
मुज मति साह्र में लिख्यो, धरज्यो मन सुजगीश ॥४७॥
एहवि परूपणा ज्यो करो; तो होय लाभ अपार।
मुग्ध जीव संसार का, उतरै पैलै पार ॥४८॥
देखो बूंटे रायजी तिम वलि आतमराम।
त्यागो मन भ्रम आपणो. साधा भविजन काम ॥४९॥
थावो ज्यो तुम एहवा, आगम अर्थ विचार।
मारवाड ढूंढाड में, वहु जन पामै पार ॥५०॥
सकल सङ्घ श्रावक सहु, वांची ज्यो धर प्रीत।
उत्तर पाछो अपावज्यो, ए परिडत जन रीत ॥५१॥
मुनिवर ना गुण गांवतां, होता चित आराम।
मन तन कपट तजी करी, वन्दत कालूराम ॥५२॥

॥ कलश ॥

इम करी रचना अति ही सुन्दर, वांचता मन उल्लसै।
देवाधि देवतिलोय स्वामी अन्तर जामी मन वसै॥
संवत उगणीस साल तेतीस मास आश्विन सुद पखे।
मुनि विनयचन्द पसाय करी ने, गोपीचन्द इम उपदिशे॥

पूर्वोक्त प्रश्न पत्रिका अजीमगञ्ज से लाडनूं आई सो वहाँ के श्रावकों ने महाराज से मालूम करी तब स्वामी ने हित शिक्षावली प्रश्नोत्तर तत्वबोध बनाया जिस को श्रावकों ने कण्ठाग्र धार के लिखाकर अजीमगञ्ज बाबू कालूरामजी के पास भेजा था।

यह प्रश्नोत्तर तत्वबोध सूत्रों के प्रमाणों सहित जिन प्रणीत वचनों को यथा तथ्य बताने वाला और आत्मार्थी भव्यों को लाभदायक है इस को वाँचने से निष्पक्षी हलु कर्मी जीव जिन मारग को सहज में अच्छी तरह जान कर यथाशक्ति व्रत पच्चखाण अङ्गीकार करके अपनी आत्मा का कल्याण कर सकते हैं; जो राग द्वेष रहित वीतराग कथित मार्ग है जिस आत्मार्थी को पुद्गलीक सुखों से अरुचि है उन्हीं के लिये यह ग्रन्थ मानो अमृत समान मिष्ट है। इसमें से कितनेक दोहा आगे श्री० खेतसी जीवराज ने मुम्बई में एक पुस्तक में छपाए थे परन्तु सम्पूर्ण ग्रन्थ यह आजतक छपा नहीं अब शहर जयपुर में निम्न लिखित श्रावको ने धारा जिन्हों के नाम।

गणेशीलालजी सींघड़,	जोरावरमलजी बाँठिया,
गुलाबचन्द लूणियाँ,	सुजानमलजी खारेड़,
चन्दनमलजी दूगड,	नाथूलालजी सरावगी,

उपरोक्त पाँचों श्रावकों के पास से पत्र लेकर मैंने संग्रह करके लिखा और सर्वसाधारण को लाभ पहुंचाने के निमित्त मेरी लघु बुद्धि प्रमाण शुद्ध करके छपाया है, यदि कोई अक्षर या लघु दीर्घादि मात्रा की गलती रही होय उसका मुझे वारम्वार मिच्छामि दुकडं है पण्डित और गुणी जनों से मेरी यही प्रार्थना है कि कोई अशुद्धि रही हो उस के लिए क्षमा चाहता हूं।

आप का हितेच्छु और गुणवानो का दास,

श्रा० जौहरी० गुलाबचन्द लूणियां जयपुर।

प्रश्नोत्तर तत्वबोध

॥ दोहा ॥

नमूं देव अरिहन्त नित, जिनाधिपति जिनराय ।
द्वादश गुणों सहित जे, वन्दूं मन बच काय ॥ १ ॥
नमूं सिद्ध गुण अष्ट युत, आचार्य मुनिराज ।
गुण षटतीस संयुक्त जी, प्रणमुं भव दधि पाज ॥ २ ॥
प्रणमुं फुन उवज्झाय प्रति, गुण पणवीस उदार ।
नमूं सर्व साधु निमल, सप्तवीस गुण सार ॥ ३ ॥
द्वादश अठ षटतीस फुन, वलि मणवीस प्रगट्ट ।
सप्तवीस ये सर्व ही, गुणवर इकशय अट्ठ ॥ ४ ॥
नवकारवाली नां जिके, मिणियां जगति मझार ।
एक एक जी गुण तणो, इक इक मिणियो सार ॥ ५ ॥
इकसौ अठगुण सहित ए, परमेष्टी पद पंच ।
ते तो भाव निचेप हैं, हूं प्रणमुं तज खंच ॥ ६ ॥
ए सहु नें प्रणमी करी, सखर समय रस सार ।
तत्व बोध अविरोध तर, आखूं अधिक उदार ॥ ७ ॥

॥ इति मङ्गलाचर्णम् ॥

॥ अथ प्रथम विजयसुर्याभाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहे जे विजय सुर, वलि सुर्याभ विचार ।
प्रतिमा नी पूजा करी, हिव तसु उत्तर सार ॥ १ ॥
प्रतिमा पूजी विजय सुर, जीव अनन्ती वार ।
विजय पणे सहु ऊपना, पाम्यां नहिं भव पार ॥ २ ॥
शक्र सामानिक संगमो, देवलोक स्थित हेत ।
पूजे जिन प्रतिमादि ते, राज बेसतां तेथ ॥ ३ ॥
तिमहिज सुर्याभादि सुर, राज बेसतां तेह ।
प्रतिमा पूतलियादि प्रति, बहु वाना पूजेह ॥ ४ ॥
सुर्याभे सुरलोक नी, स्थिति ना वश थी जाण ।
पूजा जिन प्रतिमा तणी, कीधी कही पिछाण ॥ ५ ॥
वलि ओघ निर्युक्ति नी, टीका विषे ए ख्यात ।
आचार्य गन्ध हस्त कृत, छे तिहां बहु अवदात ॥ ६ ॥
मिथ्याती वा समकिती, विमान अधिपति देव ।
देवलोक नी स्थित हुन्ती, प्रतिमादि पूजेव ॥ ७ ॥
समदृष्टि पूजे तिमज, मिथ्याती पूजंत ।
देवलोक नी स्थित वशात्, पिण धर्म कार्य नहिं हुन्त ॥८॥
सुर्याभे जिन वन्दियां, प्रभु षट वच आख्यात ।
यह पुराण आचार तुझ, जीत आचार सुजात ॥ ९ ॥

यह तुम्हारो कार्य छै, वलि तुझ करवा योग ।
ए तुझने आचरण छै, है मुझ आण आरोग ॥१०॥
नाटक नी पूछा करी, तिहां आदर न दियो स्वाम ।
मन में भलो न जाणियो, प्रगट पाठ मे ताम ॥११॥
वलि मौन राखी प्रभू, देखो पाठ प्रसिद्ध ।
ते भाव निक्षेपे आगलै, नाटक आण न दीध ॥१२॥
वलि मन मे भलो न जाणियो, ए पिण पाठ मझार ।
आज्ञा विन नहिं धर्म पुण्य, देखो आंख उघार ॥१३॥
तो तास स्थापन आगलै, आज्ञा किम दे वीर ।
एह न्याय छै पाधरो, धारो धर चित धीर ॥१४॥

॥ इति ॥

॥ अथ द्वितीय द्रोपदी अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै समकित छतां, द्रुपद सुता अवलोय ।
प्रतिमा नी पूजा करी, तसु उत्तर हिव जोय ॥ १ ॥
वृत्ति ओघ नियुंक्ति नी, गंधहस्थ कृत मांय ।
ते इक पुत्र थयां पछै, द्रोपदी समकित पाय ॥ २ ॥
पूर्व कृत निदान करी, प्रेरी छती सु आय ।
पांच पाण्डव त्यां द्रोपदी, कह्यो सुज्ञाता मांय ॥ ३

आशातनात्सम्यक्त्वभाव अतः एव द्रौपदी न सम्यक्त्व धारणी संभाव्यते पुनः ओघ निर्युक्ति चिरंतन टीकायाँ गंधहस्त्याचार्येण उक्तं द्रौपद्या नृप पुत्रिका निदान कृति भर्त्तार पंचस्यछेता निदान भोजितवान जातैक पुत्रः पुनः पाश्चात्साधू सकाशमाप्य प्रवरं सम्यक्त्व मार्गो धरंते ॥ इति ॥

॥ एहनुं अर्थ वाचिंका करी कहै छै ॥

इहाँ कह्यो द्रव्य लिङ्गी परिगृहीत चैत्यप्रति प्रतिमा ते स्यूं सम्यक् दृष्टि संभावित नही ते किण कारण थकी इसो कोई प्रश्न पूछे तेहनुं उत्तर द्रव्य लिङ्गी मिथ्या दृष्टि छै ते कारण थकी जो इम छै तो दिगम्बर सम्बन्धी चैत्य प्रतिमा स्यूं सम्यक् दृष्टि संभावित नहीं ए सत्य जो ए सत्य तो स्वर्गलोक ने विषे सास्वता चैत्य सुर्याभादि देवता समदृष्टि पूजै ते माटे ये पूर्वा पर विरुद्ध नही हुवै काँई एहवी तर्क कीधे छतैं हिव एहनुं उत्तर कहै छै, सूर्याभादि देव स्वर्गलोक ने विषै सास्वता चैत्य पूजै ते कल्प देवलोक नी थित वस अनुरोध थकी इण कारज थकी ज विरुद्ध नहीं हुवै जो इम छै तो द्रौपदी समकित धारी चैत्य ने नमस्कार कियो ते स्यूं द्रव्य लिङ्गी परिगृहीत न हुई काँई एहवी तर्क कीधे छतै हिवे एहनुं उत्तर कहै छै। द्रौपदी समकित धारणी न हुई इम कहे छतै वलि पूछ्यो द्रौपदी समकित धारणी किम नहीं, तेहनुं उत्तर। ओघ निर्युक्ति ने विषै इम कह्यो स्त्रीजन ने स्पर्श साधू ने त्रिविध २ वरजवो साधू ने अकल्पनीय कर्म आचरवा थकी समकित नुं अभाव हुवै ते कारण थकी साधू ने स्त्री जन नुं स्पर्श त्रिविध २ वरजवूं द्रौपदी आगम ने विषै साँभली ये छै "लोमहत्थं परामुसई" लोमहस्त करिके फरसै पूंजै इत्यर्थ, ते पूंजवे करी जिन नूं स्पर्श हुवै जिन ने स्त्री जन स्पर्शवे करी अशातना हुवै आशातना करिवे करी समकित नूं अभाव इण कारण थकी द्रौपदी, समकित धारणी न संभाविये, वलि ओघ निर्युक्ति नी चिरंतन टीका ने विषे गन्धहस्त आचार्ये कह्यो द्रौपदी नृप पुत्री निहाणानी करण हारी

ते माटे ये द्रोपदी, निदान विन पूरेह ।
प्रतिमा पूजो तिण समै, समकित किम पामेह ॥१४॥
ज्ञाता वृत्ति विषे कह्यं, एक वाचना मांहि ।
द्रोपदी जिन प्रतिमा तणी, अरचा कीधी ताहि ॥१५॥
दीसे येतोहिज इम कह्यो, तेह वृत्तिरे मांहि ।
नमुत्थुणं नुं पाठ त्यां, आख्यो दीसे नांहि ॥१६॥

॥ वार्त्तिका ॥

कोई कहे द्रोपदी समकित धारणी प्रतिमा क्यूं पूजी ॥तेह नुं उत्तर॥ ओघ निर्युक्ति ग्रन्थ नें अभिप्राय द्रौपदी प्रतिमा पूजी तिण वेल्यां सम्यक्त धारणी नहीं ते देखाडे छे; "दव्वं मि जिणहरा" इति व्याख्या ॥ ओघ निर्युक्ति व्याख्येयं ॥ द्रव्यलिङ्गी परिग्रहितानि चैत्यानि किं सम्यगदृष्टिर्न संभावितानि इति कस्मात् द्रव्यलिङ्गी मिथ्यादृष्टित्वात् ॥ यद्येवं तर्हि दिगम्बर संबंधीनि चैत्यानि किं सम्यकदृष्टी न संभावितानि एतस्सत्यं यद्ये तत्सत्यं नर्हि स्वर्गलोकेषु सास्वतानि चैत्यानि सूर्या भाद्यादेवाः सम्यक्दृष्टय. प्रपूज्यते तच्चैत्यानि संगमवत् अभव्य देवाः मदीयं मिति वहुमानात् प्रपूज्यं ति पूर्वा परं विरुद्धं न स्यात् ननुसूर्यां भाद्यादेवाः नटकल्पस्थिति वसानुरोधात् अत. एव विरुद्धं न सभवति यद्येवं तर्हि द्रोपद्या सम्यक्त धारण्यायानि चैत्यानि नमस्कृतानि किं द्रव्यलिङ्गी परिग्रहीतानि न भवंतीत्याह द्रोपदी न सम्यक्त्व धारणी स्यात् ॥ ओघ निर्युक्त्या इत्युक्तं ॥ इत्थी जण सघट्ट तिविहं तिवहेणं वज्ज ए साहु इति वचनात् ॥ स्त्री जनस्पर्शो त्रिविध. त्रिविधेन साधूनां वर्जनीयः साधोश्च अकल्पनीयः कर्माचारत. सम्यक्तभावात् द्रोपदी आगमेषु श्रूयते ॥लोमहत्थेयं परामुसई ॥ लोमहस्ते न परामृशति परामार्जयतीत्यर्थः तत् परमार्जने न जिनस्पर्शो जात जिनस्य स्त्री जनस्पर्शे न आशातनास्यात्

विजय विषै ज्यो वर्त्तता, वंदै इक जिनराय।
तो पिण अ चोवीसत्थो, किण विध कहियै ताय ॥८॥
विदेह खेत्र ना मुनि करै, द्वितीय आवश्यक जेह।
विचला जिन बावीस ना, मुनि पिण तिमहिज करेह ॥९॥
वेंटक नूं तसु नियम नही, पिण ज्यो कियाहिकवार।
पडिक्कमणा मे स्युं करै, द्वितीय आवश्यक सार ॥१०॥
ज्ञाता अध्ययने पञ्चमें, शैलक ऋषि ना माय।
पथक पडिक्कमणो करत, वांद्या आख्या ताय ॥ ११ ॥
ते माटै जे जिन हुवै, तेह तणो ले नाम।
द्वितीय आवश्यक नुं तदा, नाम उक्तिता ताम ॥१२॥
जिन चौवीस तणो जिहां, नियम नही छै ताम।
तिण सुं चोवीसत्था तणो, स्थान उत्कीर्त्तन नाम ॥१३॥
अनुयोग द्वार विषै अमल, आवश्यक षट मांय।
अर्थ तणां अधिकार षट, आख्या श्री जिनराय ॥१४॥
द्वितीय आवश्यक नै विषै, उत्कीर्तन आख्यात।
कह्युं अर्थ अधिकार ये. जिन गुन नाम विख्यात ॥१५॥
विदेह खेत्र मे मुनि तणै, द्वितीय आवश्यक जान।
स्व स्व जिन गुन नाम ते, उत्कीर्त्तन अभिधान ॥१६॥
जेह विजय नहीं जिन तदा, द्वितीय आवश्यक मांहि।
पूर्व जिन गुन नाम ते, इसो सभवै ताहि ॥१७॥

तिणे भर्तार पंच ने वरी निहाणो भोगवी एक पुत्र थयों पछे साधू समीपे समकित पामीं एहवो ओघ निर्युक्ति नी टीका नै विषे गन्धहस्त आचार्य कह्यो ते मिथ्यात्व ना वश थकी पुण्यादिक करी प्रतिमा पूजी।

॥ अथ तृतीय निक्षेपा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै बावीस जिन, तसु मुनि प्रतिक्रमणेह।
किस्युं करै चोवीस्थो, द्वितीय आवश्यक जेह ॥ १ ॥
तसु कहिये महाविदेह ना, मुनि प्रतिक्रमण विषेह।
द्वितीय आवश्यक स्यूं करै, न्याय विचारी लेह ॥ २ ॥
नहीं तिहां अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी पिण नांहि।
ते माटै नहिं षट अरा, सम अद्धा कहि वाहि ॥ ३ ॥
तिहां अनन्ता शिव गया, जासे मुक्ति अनन्त।
मेल नहीं चोवीस नुं, देखोजी बुद्धिवन्त ॥ ४ ॥
इक इक विजय विषै वली, एक एक जिनराज।
वर्तमान काले हुवै, उत्कृष्ट पणे समाज ॥ ५ ॥
हिव ते क्षेत्र विदेह ना, जिन थया सिद्ध अनन्त।
तसु वांद्यां चौवीस नी, संख्या नथी रहन्त ॥ ६ ॥
थासे सिद्ध अनन्त जिन, तसु वंदे जे कोय।
तो पिण जिन चोवीस नी, संख्या न रहै सोय ॥ ७ ॥

विदेहक्षेत्र मे वीस जिन, तसु मुनि ग्व जिन नाम।
अर्थ तणा अधिकार करि, ते उत्कीर्तन ताम ॥२८॥
सूत्र उववाई ने विषै, तप ना द्वादश भेद।
तृतीय भेद भिक्षाचरी, वारु नाम संवेद ॥२६॥
समवायंग विषै कह्या, बारै भेद अभिराम।
भिक्षाचरी ने स्थान जे, वृत्ति संक्षेप सु नाम ॥३०॥
भिक्षाचरी ना नाम वे, द्वितीय आवश्यक तेम।
उत्कीर्तन चोवीस्थो, उभय नाम तसु एम ॥३१॥
नवमा जिन ना नाम वे, सुविध अने पुष्फदन्त।
आख्या लोगस में प्रगट, देखोजी बुद्धिवन्त ॥३२॥
पुष्प सरिसा दन्त तसु, पुष्प दन्त अभिराम।
इम अर्थ तणा अधिकार करि, उत्कीर्तन पिण नाम ॥३३॥
कृष्ण अने बलभद्र नो, केशव राम आख्यात।
उत्तराध्ययन बावीसमें, तिम द्वितीय आवश्यक ख्यात ॥३४॥
किहां च्यार महा व्रत कह्या, तास कह्या चिहुं याम।
उत्तराध्ययन तेवीस में, केशी मुनि गुण धाम ॥३५॥
द्वितीय आवश्यक ना तिमज, उभय नाम अवलोय।
उत्कीर्तन चोवीस्थो, सहु भावे जिन जोय ॥३६॥
चोवीसम जिन ना मुनि, करै चोवीस्थो ताम।
विदेह तेवीस तणा मुनि, उत्कीर्तन जिन नाम ॥३७॥

विचला जिन बावीस ना, मुनि ने खजिन नाम ।
उत्कीर्तन अभिधान तसु, द्वितीय आवश्यक ताम ॥१८॥
धुर जिन ना मुनि ले तिमज, खजिन गुन फुन नाम ।
द्वितीय आवश्यक संभवे, उत्कीर्त्तन अभिराम ॥१९॥
वा धुर जिनना मुनि तणे, चोवीस्थो ज्यो होय ।
तो गत चोवीसी हुई, जाणे केवली सोय ॥२०॥
थया नहीं चोवीस जिन, तसु वारे अवलोय ।
द्वितीय आवश्यक ने विषे, चोवीस्थो किम होय ॥२१॥
चोवीसमा शासण धणी, तेह तणी अपेक्षाय ।
आख्युं छे चोवीस्थो, द्वितीय आवश्यक मांय ॥२२॥
द्वितीय आवश्यक ना कह्या, उभय नाम अवलोय ।
उत्कीर्त्तन चोवीस्थो, तसु हेतु हिव जोय ॥२३॥
पञ्चम अंगे धुर कह्यूं, इन्द्रभूति सुप्रसिद्ध ।
वृत्ति विषे कह्यो नाम ये, मात पिता नूं दीध ॥२४॥
गौतम गोत्र करि तसु, गौतम नाम कहाय ।
उत्तराध्ययन तेवीस मे, गाथा छट्ठी मांय ॥२५॥
तिम जिनवर चोवीसमा, तसु वारे अवलोय ।
गुणे नाम चोवीस जिन, ते चोवीस्थो होय ॥२६॥
ते चोवीस्था ने विषे, उत्कीर्त्तन अभिराम ।
अर्थ तणा अधिकार छे, पिण मुख्य चोवीस्थो नाम ॥२७॥

तिम जे कोई इक मुनि हुस्ये, पिण हिवडां ग्रहस्थ पणेह ।
कहिये द्रव्य साधू तसु, आवश्यकवत् एह ॥४८॥
जो वन्दो द्रव्य निक्षेप ने, तो तिण द्रव्य मुनि रा पाय ।
तुमे वन्दता क्युं नथी, तुम श्रद्धारे न्याय ॥४९॥
चोवीसो वर्त्तमान ने, बन्दे बहु ठामेय ।
अनागत वांद्या नथी, देखो तुर्य अंगेय ॥५०॥
तृतीय निक्षेपो द्रव्य तसु, गणधर बंद्यो नांहि ।
तो द्वितीय निक्षेपो स्थापनां, किम वंदो जे ताहि ॥५१॥
द्रव्य तीर्थंकर कृष्ण था, दीधा नेम बताय ।
नेम तणा साधु साध्व्यां, त्यां क्युं नहीं बंद्या पाय ॥५२॥
उलटो कृष्ण भणी तिणां, दीधो पगां लगाय ।
तो चौवीस्थो करतां छतां, किम वदे मुनिराय ॥५३॥
द्रव्य जिन श्रेणिक नृप हुंतो, दीधो वीर बताय ।
वीर तणां साधु साध्वियां, त्यां क्युं नही वंद्या पाय ॥५४॥
तीर्थंकर बन्दन तणुं, तसु राख्यां रै चाहि ।
तो कृष्ण अने श्रेणिक तणा, त्यां क्युं नही बद्या माहि ॥५५॥
उलटी करी विडम्बना, जाणी ने भरतार ।
तो चौवीस्थो करतां छतां, किम वदे अणगार ॥५६॥
जिन बन्दे तिहुं काल नां, नमोत्थुणं रै अन्त ।
किणी सूत्र में ते नहीं, देखोजी बुद्धिवन्त ॥५७॥

मुझ ने भ्यासै एहवा, वारू न्याय विचार।
वलि केवली जे वदे. तेहिज सत्य उदार ॥३८॥
भाव निक्षेपै भरत नी, चौबीसी वर्त्तमान।
पाठ वंदे बहु ठाम छै, लोगस मांहि सुजान ॥३९॥
भाव निक्षेपै ऐरवत, चौबीसी वर्त्तमान।
पाठ वंदे बहु ठाम छै, समवायंगे जान ॥४०॥
चौबीसी भरत ऐरवत, अनागत जिन नाम।
द्रव्य निक्षेपी तुर्य अङ्ग, वंदे पाठ न ताम ॥४१॥
अष्ट अने चालीस ना, वर्त्तमान जिन नाम।
भाव निक्षेपो ते भणी, पाठ वंदे बहु ठाम ॥४२॥
अष्ट अने चालीस ना, अनागत जिन नाम।
द्रव्य निक्षेपो तें भणी, वंदे टाल्यो स्वाम ॥४३॥
द्रव्य निक्षेपै एह जिन, गणधर वंद्या नांहि।
तो चौवीस्थो करतां छतां, द्रव्य जिन किम वंदाहि ॥४४॥
तीर्थङ्कर घर में छतां द्रव्य निक्षेपै जेह।
तेहने मुनि वंदे नहीं, तुझ लेखे पिण तेह ॥४५॥
तो होनहार जिनवर भणी. चौवीस्था विषेह।
मुनिवर किम वंदे तसु, न्याय विचारी लेह ॥४६॥
वलि कह्यो अनुयोग द्वार में, जे आवश्यक नूं जान।
होस्यै पिण न थयो हजी. ते द्रव्य आवश्यक पिछाण ॥४७॥

कोई कहै आचार्य्य ना, उपाध्याय ना ताहि।
उपग्रण नी आशातना, कहि टालवी काहि ॥६८॥
ज्ञान दर्शन चारित तणां, तेह उपधिरै मांहि।
केहवा गुण छे ते भणी, उपधि सघटवु' नांहि ॥६९॥
नवमें दशवैकालिके, द्वितीय उद्देशे ख्यात।
इम कहे उत्तर तेहनु', सांभलजो अवदात ॥७०॥
सूत्र विषै तो इम कह्यो, गुरु कायाइ' करेह।
तिमहिज गुरु नां उपधि करि, सघट्टे थये छतेह ॥७१॥
मुझ अपराध खमो तुम्हे, वलि न हूँ करूं कोय।
इम भाषे सुविनीत शिष्य, तास न्याय हिव जोय ॥७२॥
आचार्य्य नां उपधि ए, तास प्रयोगे आय।
जिम गुरु के सहवर्त्ती तनु', तेम उपधि पिण ताय ॥७३॥
भाव निक्षेपे गणपति, तास उपधि तनु जेम।
तासु सघट्टथयां खामवु', आख्यूं सूत्रे एम ॥७४॥
थयु वलि अपराध मुझ, खमं तुम्हे अवलोय।
ए वच प्रत्यक्ष गुरु तणो, न्याय विचारी जोय ॥७५॥
जो खमायवो हुवे उपधि ने, तो देखो चित देह।
वन्दना करो खमायवे, उपग्रण स्यु' जाणेह ॥७६॥
ये तो उपधि सहित जी, आचारज नी जोय।
कही अशातना टालवी, नथी अन्यथा कोय ॥७७॥

जे कोई जीव अजीव नूँ नाम आवश्यक देह।
ते आवश्यक नों प्रभु, नाम निक्षेप कहेह ॥५८॥
अनुयोग द्वार विषे इसो, प्रगट पाठ पहिछाण।
तिमहिज तीर्थंकर तणूं, नाम निक्षेपो जाण ॥५६॥
जिम कोई जीव अजीव नूँ, ऋषभ नाम छै केह।
ऋषभ देव भगवान नो, नाम निक्षेपो तेह ॥६०॥
जो वांदो नाम निक्षेप ने, तो तिण ऋषभारा पाय।
क्यूं नहिं वांदो छो तुम्हे, तुझ श्रद्धा रै न्याय ॥६१॥
किण रो नाम दियो वली, अरिहन्त ने भगवान।
नाम अरिहन्त बन्दो तुम्हे, तो क्यूं नहिं वन्दो जान।६२।
सिद्ध निरञ्जन नाम पिण, दीसै बहु जग मांहि।
नाम सिद्ध बन्दो तुम्हे. तो क्यूं नहि बन्दो याहि ॥६३॥
केइक मनुषां रा कारटा, ते पिण वाजे आचार्य ताय।
बन्दो नाम आचार्य तुम्हे, तो क्यु नहिं वंदो पाय ॥६४॥
केइक ब्राह्मण लोक मे, बाजे छै उपाध्याय।
नाम उपाध्याय बदो तुम्हे, तो क्यु नहिं बदो पाय ॥६५॥
जोगी सन्यासी प्रमुख, साधू नाम कहाय।
नाम साधु बांदो तुम्हे, तो क्यु नहिं बन्दो पाय ॥६६॥
ज्ञान दर्शन चारित्र ना, गुण नहीं छै जे मांय।
तेह बंदवा योग किम, निमल विचारो न्याय ॥६७॥

ज्ञान दर्शन चारित तणा, तिणसें गुण नहिं कोय ।
तिणसुं दहन क्रिया कियां, अशातना नहिं होय ॥८८॥
करी स्थापना तेहने, वांद्या कह्यो छो धर्म ।
तो ए सागे तनु वालियां, लागे आशातना कर्म ॥८९॥
आवश्यक नो जाण थो, काल कियो तिहवार ।
द्रव्य आवश्यक तनु कह्यो, देखो अनुयोग द्वार ॥९०॥
तिम मुनि काल कियां छतां, जीव रहित जे देह ।
द्रव्य साधु कहिये तसु, न्याय विचारी लेह ॥९१॥
वन्दनीक द्रव्य मुनि कहो, तो तुझ लेखे ताय ।
द्रव्य साधु बाल्यां छतां, अशातना पिण थाय ॥९२॥
जम्बूद्वीप पन्नती में कह्यो, जिन जनम्यां सुर राय ।
जन्म भुवन जिनवर तणा, तसु प्रदक्षिणा दे आय ।९३।
जिन ने वा जिन मात प्रति, प्रदक्षिणा त्रण वार ।
देई कर जोड़ी करी, वदे शक्र अवधार ॥९४॥
हे धरण हारी रतन कूखिनी, थावो तुझ नमस्कार ।
इह विध सुरपति उचरै, ए पिण जीत आचार ॥९५॥
इण लेखे मरु देवी प्रति, इन्द्र कियो नमस्कार ।
पिण समकित किण पै लही, वारु न्याय विचार ॥९६॥
ग्रहस्थ पणे जिन जनक ना, पद प्रणमे अवलोय ।
लौकिक हेते जाणवुं, धर्म हेतु नहिं कोय ॥९७॥

सयनाशन गणपति तणां, तास संघट्टवूं नांहि ।
तेहिज आचार्य्य विहार करि, गया हुवे जो ताहि ॥७८॥
सयणाशण तेहिज तव. शिष्य सेवे के नांहि ।
भोगवियां आशातना. लागी के नहि ताहि ॥७९॥
जे पृथिवी शिल ऊपरे, बेठा श्री भगवान ।
कालान्तर गोयम सुधर्म, बेठे के नहीं जान ॥८०॥
छायागणी ना तनु तणी, शिष्य अक्रमी तास ।
चाले के चाले नहीं, जोवो हिये विमास ॥८१॥
तुझ लेखे छाया भणी, आक्रमवूं पिण नांहि ।
संघटो पिण करवु नहीं, गुरू छाया नु ताहि ॥८२॥
ते माटे ए स्थापना, वन्दन . योग न होय ।
ज्ञान दर्शन चारित्र तणा, तिणमें गुण नहिं कोय ॥८३॥
अथवा आचार्य्य तणा, पगला तणी पिछाण ।
तुम्हे करो छो स्थापना, तेहने वन्दो जाण ॥८४॥
तो चाले गुरू केड शिष्य, गमन करन्ता जोय ।
धरती ऊपर गुरू तणा, पगला मडे सोय ॥८५॥
शिष्य ना पग ते ऊपरे, पडियां दण्ड स्यु आय ।
वन्दनीक पगला कहो, ते लेखे दण्ड थाय ॥८६॥
चारित सहित जे गुरू भणी, वदे तीरथ च्यार ।
काल कियां तसु कायने, भस्म करे तिह वार ॥८७॥

तीर्थंकर जनम्यां पछे, ते पिण द्रव्य जिनराय।
भाव निक्षेपे तेहने, ग्रहस्थो कहिये ताय ॥१०८॥
तीर्थंकर दीक्षा लियां, तसु द्रव्य जिन कहिवाय।
भावे ते मोटा मुनी, वन्दनीक तसु पाय ॥१०९॥
चौतीस अतिशय ओपता, वाणी गुण पैंतीस।
केवल ज्ञान थयां पछे, भावे जिन जगदीश ॥११०॥
वन्दनीक भावे मुनी, वलि भावे जिनराय।
ओलख ने जपियां थकां, पातिक दूर पुलाय ॥१११॥

॥ इति निक्षेपाधिकार ॥

॥ अथ चतुर्थम् अम्बडाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै अम्बड कह्यु, अरिहन्त विन अवलोय।
वलि अरिहन्त ना चैत्य विन, नथी वंदवा मोय ॥ १ ॥
प्रथम उपाङ्ग विषै इसो, आख्यो श्री जिनराय।
ते अरिहन्त ना चैत्य कुण, तसु उत्तर कहिवाय ॥ २ ॥
अरिहन्त तो धुरपद विषै, प्रतिमा चैत्य कहाय।
तो मुनिवर नहीं वन्दवा, अन्य वर्ज्या तिण न्याय ॥ ३ ॥
मुनि पद तो है पञ्चमो, ते धुरपद में नहीं आय।
तिण कारण अरिहन्त ना, चैत्य मुनि कहिवाय ॥ ४ ॥

ज्ञाता अध्ययन आठमे. मल्लिनाथ भगवान।
लागी पगां पिता तणे, लौकिक हेते जान ॥९८॥
मल्लिनाथ थया केवली, तठा पछै मा तात।
वाणी सुणी श्रावक थया, पाठ विषे अवदात ॥९९॥
इण लेखे मल्लि नो पिता, पहिलां श्रावक नांहि।
तास पाय प्रणम्यां मल्ली, धर्म नहीं तिण मांहि ॥१००॥
तिम हिज द्रव्य जिनवर भणी, इन्द्र करै नमस्कार।
ए तसु जीत आचार छै, श्रीजिन आज्ञा बार ॥१०१॥
जीव रहित जिन देह ते, द्रव्य जिन तास कहेह।
ते वंदनीक किण विध हुवै, न्याय विचारी लेह ॥१०२॥
जो वन्दनीक ते द्रव्य हुवै, तो तुझ लेख कहेह।
तनु प्रते दग्ध कियां छतां, आशातन लागेह ॥१०३॥
ज्यो द्रव्य निक्षेप वन्दो तुम्हे, तो जमाली आदि।
द्रव्य साधु कहिये तसु, वन्दो क्यूं न संवाद ॥१०४॥
भावे जे साधू हुन्तो, सेव्यो तिण अणाचार।
भाव निक्षेपो तसु गयो, के गयो द्रव्य जिवार ॥१०५॥
मुनि वेसे सेव्यो तिणे, अणाचार अवधार।
ते द्रव्य मुनि वन्दो के नहिं, धर्म हेत धर प्यार ॥१०६॥
कृष्णादिक नरके पड्या, द्रव्य जिनवर कहिवाहि।
भावे कहिये नेरिया, वन्दनीक ते नांहि ॥१०७॥

कोई कहै तसु देव ने, किम बोलावे ताय।
वलि अशनादिक किम दिये, निमल सुणो तसु न्याय ॥७॥
पुत्र सुजेष्टा नूं कह्यो, महादेव तसु देव।
नवमे ठाणे अर्थ में, ते वीर थकां स्वय मेवं ॥ ८ ॥
चेडा राजा नी सुता, तेह सुजेष्टा जाण।
तिण कारण तसु देव ते, विद्यमान पहिछाण ॥ ९ ॥
तेहने बोलावे नहीं, वलि नहीं आपे आहार।
वलि चैत्य मुनि अरिहन्त ना, भ्रष्ट थया तिणवार ॥१०॥
ते अन्य तीर्थिक में जई मिल्या, अन्य तीर्थिक पिण तास।
ग्रहण किया निजमत विषे, अन्य तीर्थिक गृहित विमास ॥
नहीं बोलावूं तेहने, वलि नहीं आपूं आहार।
अभिग्रह ए आनन्द लियो, वारू न्याय विचार ॥१२॥

॥ इति आनन्दाधिकार ॥

अथ षष्टम् जंघा विद्याचारणाधिकार।

॥ दोहा ॥

कोई कहै मुनि लब्धि धर, जङ्घा विद्याचार।
जावे रुचक नन्दीश्वरें, वन्दे चैत्य तिवार ॥ १ ॥
वीसम शतके भगवती, नवम उद्देश विषेह।
प्रभू आख्या ते चैत्य कुण, उत्तर तास कहेह ॥ २ ॥

जिन प्रतिमा जिन सारसी, तुम्हे कहो तिण न्याय ।
प्रतिमा तो धुरपद हुई, मुनि धुरपद नहीं आय ॥ ५ ॥
अरिहन्त तो ए देव हैं. अरिहन्त चैत्य सु सन्त ।
तेह गुरु ए देव गुरु, बिना न अन्य वंदन्त ॥ ६ ॥

॥ इति अम्बडाधिकार ॥

॥ अथ पंचम् आनन्दाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै आनन्द कह्यो, अनतीर्थिक संग्रहीत ।
अरिहन्त ना जे चैत्य प्रते, वन्दू नहीं प्रतीत ॥ १ ॥
एह सातमा अङ्ग मे, दाख्यो गणधर देव ।
ते अरिहन्त ना चैत्य कुण, उत्तर तासु कहेव ॥ २ ॥
आनन्द कह्यु अण तीर्थ ने, अणतीर्थिक ना देव ।
अन्यतीर्थिक परिग्रहीत जे, अरिहन्त चैत्य कहेव ॥ ३ ॥
ए तीनूं ने वन्दना, करवी कल्पे नांहि ।
नमस्कार करिवूं नहीं, ए तीनूं ने ताहि ॥ ४ ॥
पहिला बोलाव्यां बिना, बोलूं नहीं इक वार ।
बार बार बोलूं नहीं, नही आपूं तसु आहार ॥ ५ ॥
चैत्य इहां प्रतिमा हुवे, तो बोलावे केम ।
वलि आपे असणादि किम, न्याय विचारो एम ॥ ६ ॥

तथा चैत्य ते जिन बहु, तेह तणा गुण गाय।
धन्य प्रभू इम कहै तसु, सत्य वचन सुखदाय ॥१३॥
कोई कहै प्रभूजी भणी, चैत्य किहां आख्यात।
उत्तर तेहने आखिए, सुणज्यो सुगण सुजात ॥१४॥
सूर्याभे मन चिन्तव्युं, कल्याण कारी स्वाम।
दूरितोपशम कारी थकी, मगलीक अभिराम ॥१५॥
तीन लोकना अधिपति, तिणसुं देवत नाथ।
हेतु सुप्रसन्न मनतणा, तिणसुं चैत्य आख्यात ॥१६॥
राय प्रश्नेणी वृत्तिमें, चैत्य अर्थ जिन ख्यात।
तेमाटे इहां संभवे, बहु जिन गुण अवदात ॥१७॥
बहु जिनेन्द्र वा जिनकहै, रुचक नन्दीश्वर मांय।
भाव कह्या तिमहिज सहु, देखि हिये हुलसाय ॥१८॥
धन्य जिनेन्द्र धन्य केवली, गिरि कूंटादिक जेह।
जेम कह्या तिमहिज ए, इम तसु स्तुति करेह ॥१९॥
ते माटे इहां चैत्य ते, बहु जिन कहिए सोय।
बन्दई तसु स्तुति करै, एह अर्थ पिण होय ॥२०॥
विन "आलोयां" ते मुनी, काल करै जो कोय।
तास विराधक प्रभु कह्यो, पाठ विषे अवलोय ॥२१॥
जब को तर्क करै इसो, दिसां गोचरी जाय
पाछा आवी पडिक्कमै, ईर्या वही मुनिराय ॥२२॥

जङ्घा विद्या चारणा, रुचक नन्दीश्वर जाय।
तिहां वन्दे पाठ छै, पिण नमंसई नांहि ॥ ३ ॥
मानुषोत्तर गिरी विषे, कूंट च्यार आख्यात।
नथी कह्यूं सिद्धायतन, तूयं ठाण अवदात ॥ ४ ॥
वृत्ति विषै द्वादश कह्या, तिहां देवता वास।
आख्या पिण सिद्धायतन, कूंट कह्यो नहीं तास ॥ ५ ॥
तिहां चैत्य वन्दे किसा, तिण सूं चैत्य सुज्ञान।
करै तास गुणग्राम अति, देखो ने जे स्थान ॥ ६ ॥
धन भगवन्त नो ज्ञान ए, धन्य भगवन्त रो ज्ञान।
जेम कह्यं तिमहिज सहु, इम करै स्तुति जान ॥ ७ ॥
नमंसई तिहां पाठ नहीं, वन्दई पाठज एक।
तेहनुं छै स्तुति अर्थ, देखो धर सु विवेक ॥ ८ ॥
प्रश्न हजारां पूछिया, गोयम पञ्चम अङ्ग।
तिहां वंदई नमंसई छै, विहुं पाठ सुचङ्ग ॥ ९ ॥
ए तो छै अति जवव गति, रुचक द्वीप लग जाय।
तिहां नमंसई पाठ नहीं, नमोत्थूणं पिण नाय ॥१०॥
श्रावक तुङ्गियां ना प्रवर, आया स्थिवरां पास।
तिहां वन्दई नमंसई, उभय पाठ गुण रास ॥११॥
जो प्रतिमा वन्दन गया, तो करता नमस्कार।
नमोत्थूणं गुणता वलि, देखो हृदय विचार ॥१२॥

वही पडिकमियाँ विना काल करे तो उणरी श्रद्धारे लेखै ओ पिण विराधक हुवे, धर्म कारणे जाता धर्म कारणे आवतां ईर्यावही पडिकमिया विना काल करे तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक हुवे, जद तो तीर्थंकर ने वाँदवा जातां आवतां ईर्यावही पडिकमियाँ बिना काल करे तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक, अरिहन्त गणधर आचार्य्य उपाध्याय महामोटा पुरुषाँ ने वलि साधू साध्वियाँ ने वांदण जातां ने आवतां ईर्यावही पडिकमियाँ बिना काल करे तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक, इम इत्यादिक अनेक कार्य्य कियाँ ईर्यावही पडिकमवी छै, जद ते पिण कार्य्य करतां ईर्यावही पडिकमियाँ विना काल करे तो उणरे लेखै ओ पिण विराधक, इम ईर्यावही पडिकमियाँ बिना विराधक हुवै छै तो साधू ने पहिलाँहीज ईर्यावही पडिकमवा वालो कार्य्य करणो हिज नही, तथा पडिलेहणा कियाँ पछे अथवा विचै ईर्यावही पडिकमियाँ विना काल करे तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक हुवे, इम विहार करतां विचे ईर्यावही पडिकमियाँ बिना मरै तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक हुवै, जो इम विराधक हुवे जद तो तीर्थंकर ने वन्दवा जातां ने आवतां विचे ईर्यावही पडिकमियां विना काल करै तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक हुवे, अरिहन्त गणधर आचार्य्य उपाध्याय महा मोटा पुरुषाँ ने वलि साधू साध्वियाँ ने वन्दवा जातां ने आवतां विचै काल करै तो उणरे लेखे ओ पिण विराधक छै, इम ईर्यावही पडिकमियाँ विना विराधक हुवे तो साधाँने पहिलाँ हिज ईर्यावही पडिकमवारो कार्य्य करणो हीज नहीं, इण श्रद्धारे लेखै तो साधू ने हालवो चालवो इत्यादि कयुंही कार्य्य करणो नहीं, अरिहन्त ने भगवन्त ने तीर्थंकर ने गणधर ने आचार्य्य ने उपाध्याय ने महा मोटा पुरुषाँ ने साधाँ ने साध्वियाँ ने किण ही ने वन्दवा जाणो नही कदा विचै ही काल करै तो विराधक पणो थाय छै आऊखा रो भरोसो छे नही तिणसूं, उणरी श्रद्धा रै लेखै तो धर्म रो कार्य्य करण ने कठे ही जाणो नहीं जातां ने आवतां ईर्यावही पडिकमियां बिना मरै

तिम ए पिण आवी करी, ईर्या वही गुणेय।
तासु उत्तर कहीजिये, सांभलज्यो चित देय ॥२३॥
दिसां गोचरी मुनि जई, आवंतां कियो काल।
तेह विराधक नहीं हुवे, जोवो नयण निहाल ॥२४॥
जंघा विद्याचारणा, काल कियां अन्तराल।
तास विराधक प्रभु कह्या, नथी आराधक न्हाल ।२५।
तिणसुं ईर्या वही तणूं, नथी मिले ए न्याय।
लब्धि फोड़वी तेहनो, दंड कह्यो जिनराय ॥२६॥

॥ वार्त्तिका ॥

कोई कहै जंघाविद्याचारण लब्धि फोडी ने नन्दीश्वर द्वीपे जाय ते आलोयाँ बिना मरै तो विराधक कह्यो ते आलोयणाँ ईर्यावही नी कही छैं दिसाँ गोचरी जावैं तेहनी पिण ईर्यावही गुणै तिम ए पिण लब्धि फोडने नन्दीश्वर द्वीप गया तेहनी पिण ईर्यावही जाणवी इम कहै तेहने कहिणो इम ईर्या वही गुण्या विना विराधक हुवै तो गोचरी पिण जाणो नहीं कदा ठिकाणे आयाँ विना पहिलाँ मरि जाय तो विराधक हुवै, वलि गाम बाहिर दिसां जाणो नहीं। विहार करणो नहीं। पडिलेहणा करणी नहीं। क्षण भंगूर काया है सो ईर्यावही गुणियाँ विना पहिलां ही मर जाय तो विराधक होवणो पड़ै ते माटै; साधू गोचरी गयो पाछो आवताँ बीच में काल करै ईर्यावही पडिकमियाँ विना जव तो ओ पिण विराधक हुवै; इम विहार करताँ विचै ईर्यावही पडिकम्यां विना काल करै तो उणरी श्रद्धारे लेखै ओ पिण विराधक हुवै, इम तो पडिलेहणा कियां पछै अथवा विचै ईर्या

याता अर्थे लब्धि जे, फोड़वियां दण्ड आय।
तो पुष्पादिक कार्य में, धर्म पुण्य किम थाय ॥२६॥

॥ इति ॥

॥ अथ सातमो धर्मार्थ हिन्सा न गिणै तेहना उत्तर नुं अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै धर्म कारणे, जीव हणै जो कोय।
पाप न लागै तेहने, हिव तसु उत्तर जोय ॥ १ ॥
देवल प्रतिमा कारणे, हणै जु पृथिवी काय।
मन्द बुद्धि तेहने कह्या, दशमा अङ्ग रै मांय ॥ २ ॥
अर्थ धर्म ने हेत हणै, मन्द बुद्धि कह्या तास।
ए पिण दशमा अङ्ग मे, प्रथम अध्ययन विमास ॥ ३ ॥
जन्म, मर्ण मूकायवा, हणे जे पृथिवी काय।
कह्या अहेत अबोध तसु, प्रथम अङ्ग रै मांय ॥ ४ ॥
धर्म हेतु जन्तु हणे, दोष इहां नही कोय।
ए अनार्य नूं बचन, आचाराङ्ग जोय ॥ ५ ॥
जिनाला सावद्य सहु, वचन माल पिण सोय।
मुक्त ने आचरवा नहीं, प्ररूपवा नही कोय ॥ ६ ॥
महानिशीथ रै ग्रंथ मे, कमल प्रभा: इम ख्यात।
सावद्य पाप सहित में, धर्म पुण्य किम थात ॥ ७ ॥

तो विराधक पणो थाय छै, इण श्रद्धारै लेखै तो शासन सर्व ऊठ जावै या तो महा विपरीत श्रद्धा छै. अरिहन्त भगवन्त तो यूं कह्यो छे साधू चारित्रवाने कर्मयोगे अनेक भारी कार्य्य कीधा छै मोटा मोटा दोष सेव्या छै पछै गुरु कने अनेक कोसाँ लगे आलोवण चाल्यो छै कदा गुरु पासै नहीं पूगो विचै ही आलोयाँ विना काल करै तो तिण नें भगवन्त अराधक कह्यो छै, तो जंघा चारण ने विद्या चारण नी ईर्यावही पडिकमवारी सरधा नहीं थी काँई ? ये विराधक किसे लेखैं हुवै तो ऐसा ये काँई भोला छा अने वलि याँरै ईर्यावही पडिकमवा री सरधा न हुवै, तो गौचरी दिसाँ विहार प्रमुख नो गुरु कने आज्ञा माँगै तो आज्ञा पिण देणी नहीं विच मे मरि जाय तो विराधक हुवै, वलि नन्दी उतरवा री पिण आज्ञा माँगै तो आज्ञा देणी नही विचै मरि जाय तो विराधक हुवै ते वारै नीकलियाँ पहिलाँ ही ईर्यावही तो न गुणी इम जो विराधक हुवै। तो नन्दी उतरताँ मोक्ष किम जाय, सागारी संथारो पचखी नावामे वैसे एहवुं आचाराङ्ग अध्येयने तीसरे कह्यो छै, जो ईर्यावही गुणियाँ विना विराधक हुवै नावा में सागारी संथारो पचखी किम वैसे, वलि नन्दी उतरवा री साधाँ ने भगवान आज्ञा दीधी अने गौचरी प्रमुख नी पिण आज्ञा दीधी छै तिण सूं नन्दी नावा उतरताँ गौचरी प्रमुख पूर्वे कार्य्य कह्या ने करताँ मरै तो अथवा गौचरी प्रमुख कार्य्य करी ठिकाणै आयाँ ईर्यावही गुण्याँ पहिलां मरै तो आराधक पिण विराधक नही।

॥ दोहा ॥

धर्म हेतु हिन्सा कियां, तुम्हे दोष कहो नांहि।
पुष्पादिक आरम्भ मे, धर्म कहो क्यो ताहि ॥२७॥
तो यात्रा करवा भणी, लब्धि फोड़वी जेह।
धर्म हेतु ए कार्य नो, किम प्रभू दण्ड कहेह ॥२८॥

निरवद्य छै तो मुनि करै, रही सामायक मांय।
ते पिण द्रव्य पूजा करै, तुभ श्रद्धा रै न्याय ॥१५॥
जो सावद्य द्रव्य पूजा हुवै, तिण सूँ मुनि न करेह।
तो सावद्य मांही धर्म पुन्य, कीम कहीजे तेह ॥१६॥
आरम्भ जे छकाय नूँ, पचण पचावण जास।
निज वा पर अर्थे किया, निन्दुं गरहुं तास ॥१७॥
इम कह्युं बन्देतू विषे, सप्तम गाथा जोय।
तो साहम्मी वच्छल विषै, धर्म पुन्य किम होय ॥१८॥

॥ इति ॥

॥ अत्र वन्देतु नीं गाथा ॥ छकाय समारम्भे, पयण पयावण जे दोसा ॥ अत्तट्ठा परट्ठा ए, उभयट्ठा चेव तं निन्दे ॥

॥ इति धर्मार्थ हिन्साधिकार ॥

॥ अथ आठमो सुर्याभाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै सुर्याभसुर, प्रतिमा पूजी ताम।
तिहां हित सुचम पाठ है, निसेस्सा ए अनुगाम ॥ १ ॥
ते निसेस्सा नूं अर्थ तो, मोच्च अमर पद होय।
ते माटे शिव हेतु ए, तसु उत्तर हिव जोय ॥ २ ॥

ग्रन्थ संघ पट्टक कियो, जिन वल्लभ सुरेण ।
जिन प्रतिमा यात्रा भणी, किस्यूं कह्यो छे तेण ॥ ८ ॥
लोहना कांटा ऊपरे, मांस डली प्रति ताहि ।
मूंकी पकड़े मीन ने, धीवर नर जग मांहि ॥ ९ ॥
तिम जिन बिम्ब जिन नाम करि, मुग्ध लोक जे मीन ।
जिन यात्रादि उपाय करि, कुगुरू ठगत मत हीन ॥१०॥

॥ काव्य ॥

अत्र जिन वल्लभ सूरि कृत संघ पट्टानी काव्य ।

आक्रष्टुं मुग्धमीनान् वडिशपिशितवद्विंबमादर्श्य जैनं । तन्नाम्ना रम्यरूपान पवग कमठान् स्वेष्ट सिद्ध्यै विधाप्य ॥ यात्रा स्नात्रोद्युपायै र्नमसितक निशा जागराद्यै श्छलैश्च । श्रद्धालुर्नामजैनै श्छलित इव शठै र्वंच्यतेहाजनोऽयम् ॥२१॥

॥ दोहा ॥

भस्म ग्रह करिने वलि, दशम् अछेर करेह ।
मिथ्या मत काढ्युं संघपट्टे, जिन वल्लभ सूरेह ॥११॥
इन्द्र बिम्ब प्रति बाल विन, ग्रहिवूं कुण वंछेह ।
तृतीय काव्य भक्तामरे, न्याय विचारी लेह ॥१२॥
तिम हिज जे जिन बिम्ब प्रति, जिन जाणी ने जेह ।
बाल अजाण विना कंवण, अङ्गीकृत करेह ॥१३॥
द्रव्य पूजा सावद्य छे, के निरवद्य आख्यात ।
उत्तर हिये विचारिये, छोडी ने पक्षपात ॥१४॥

सामानिक परिषध प्रमुख. सुर सुर्याभ प्रतेह ।
अष्ट सहस्र ने चौसठ फुन, जल भरिया कलशेह ॥१३॥
इन्द्राविषेक करी कहै, सुरगण में जिम इन्द्र ।
तारागण में चन्द्र जिम, असुर विषै चमरिन्द्र ॥१४॥
नाग विषै धरणिन्द्र जिम, भरत चक्री मनु मांहि ।
बहु पल्योपम लग तुम्हे, बहु सागरोपम ताहि ॥१५॥
च्यार सहस्र सामानिका, यावत सोल हजार ।
आतम रक्षक देवता, तेह तणो अवधार ॥१६॥
अधिपती फुन स्वामी पणो, करतां थकां ज सोय ।
पालन्ता विचरो तुम्हे, इम कहै सुर अवलोय ॥१७॥
अलंकार सभा तिहां, आवी करै अलंकार ।
आवी व्यवसाए सभा, पुस्तक बांच तिवार ॥१८॥
पछे आय सिद्धायतन, प्रतिमादिक पूजेह ।
सूत्रे विस्तार छे बहु, इहां कह्यु संक्षेपेह ॥१९॥
इम प्रतिमा दाढां पनग, पूतलियांदिक पेख ।
बहु वाना पूजा तिणे, स्वर्ग स्थित थी देख ॥२०॥
ऊपजियो सुर्याभ तब, चिन्तवियो मन जेय ।
पूर्व पछे करिवुं किस्युं, सुभ पूर्व पछे स्युं श्रेय ॥२१॥
अेह कार्य कीधे छते, पूर्व पछे स्यु मोय ।
हित सुख प्रमुख भणी हुइं, इम चिन्तवियो सोय ॥२२॥

राय प्रशेणी मे कह्युं, जे सुर्याभ सु देव।
उपजियो तब चिन्तव्यूं, मन मांहि स्वयमेव ॥ ३ ॥
स्युं मुझ ने करिवो हिवे, पहिलां पछे ज काज।
स्युं मुझ पहिलां श्रेय जे, श्रेय फुन पछे समाज ॥ ४ ॥
स्युं मुझ पहिलां ने पछे, हित सुखम निस्सेसाहि।
अनुगामी केडे हुइं, इम चिन्तव्यो मन मांहि ॥५ ॥
सामानिक परिषध सुरे, जाणो ए अध्यवसाय।
कर जोड़ी सुर्याभ प्रति, बोल्या एम बधाय ॥ ६ ॥
जिन प्रतिमा दाढ़ां प्रते, आप भणी अवलोय।
अन्य बहु वैमानिक सुरा, सुरी प्रते फुन जोय ॥ ७ ॥
अरचण जोगज जाव फुन, सेवा जोगज जेह।
ते माटे पहिलां पछे, तुम ने करिवुं एह ॥ ८ ॥
पहिलां पछेज ए श्रेय, पूर्व पच्छा पिण जोय।
हित सुखम निस्सेसाए हैं, अनुगामिक अवलोय ॥ ९ ॥
इम सांभल सुर्याभसुर, हृष्ट तुष्ट सलहीज।
यावत् विकस्यो हृदय फुन, उठ्यो सेझ थकीज ॥१०॥
पवर सभा उपपात थी, निकली द्रह विषेह।
आवी ने ते द्रह प्रते, तथा प्रदक्षिण देह ॥११॥
द्रह में उतर स्नान करै, जिहा सभा अभिषेक।
तिहां आवी सिंघाशणे, बैठो पूर्व सम्पेख ॥१२॥

उत्तराध्ययन बावीस में, द्रव्य मंगल संवाद।
तोरण जातां नेम कृत, दधी अक्षत द्रोवादि ॥३३॥
तिमहिज सुर्याभे करी, संसारिक मंगलीक।
पूजा जिन प्रतिमादि नी, स्वर्ग स्थिति तस ठीक ॥३४॥
प्रभू वन्दन अवसर कह्यूँ, पेचा हित सुख आदि।
पेचा ते पर भव विषै, देखो तज असमाधि ॥३५॥
प्रतिमा त्यां पूज्वी पछा, फुन वन्दन जिन राय।
पेचा पाठ कह्यो तिहां, राय प्रश्रेणी मांय ॥३६॥
पंचमा अङ्ग दूजे शतक, प्रथम उद्देशक पेख।
खन्धक दीक्षा अवसरे, इह विध कह्युं विशेष ॥३७॥
धन काढे ग्रही लाय थी, पछा पूरा ए ताय।
वञ्छित काल थकी पछै, फुन पहिलां कहवाय ॥३८॥
ते ग्रही जाणे मुझ हुसे, ए धन हित सुख काज।
चम समरथ निस्सेसाय जे, फुन अनुगामिक साज ॥३९॥
तिम जरा मरण री लाय थी, स्वात्म काढ्यां ताय।
पर लोके हित सुख भणी, वलि मुज चम निस्सेसाय ॥४०॥
मेघ कह्युं धन लाय थी, काढ्यां पूर्व पश्चात्।
हित सुखचम निस्सेसाय फुन, पिणपेचा पाठ न स्यात ॥४१॥
तिम जरा मर्ण री लाय थी, स्वात्म काढ्यां सोय।
हुसी विछेद संसार नूं, ज्ञाता प्रथम सु जोय ॥४२॥

धर्म कार्य तो जाणतो, समदृष्टि थो जेह ।
तेह तणूं स्युं चिन्तवे, किम तसु अमर वदेह ॥२३॥
पिण राज बेसतां कृत्य जे, करिवूं पूर्व पछेह ।
तेह कार्य संसार ना. मङ्गल हेतु कहेह ॥२४॥
तेह रीत नवी जाणतो, नवो ऊपनो एह ।
तिण स्यूं चित्यो मुझ किस्युं, करिवो पूर्व पछेह ॥२५॥
एह भाव सुर्याभ नां, सामानिक सुर धार ।
वलि परिषधनां देवता, जाण लिया तिण वार ॥२६॥
ए जूना था ते भणी, राज बैसतां ताय ।
कारज करवो तेहनां, जाण हुन्ता अधिकाय ॥२७॥
ते माटे सुर स्थिति हुन्ती, तं दीधी तिणे बताय ।
जिन प्रतिमा दाढां भणी, कह्यो पूजवुं ताय ॥२८॥
स्वर्ग रीत जाणी कह्युं, सुर सुर्याभ प्रतेह ।
पूजा हित सुख प्रमुख पिण प्रभु न कह्या वच एह ॥२९॥
पुव्वी पच्छा पाठ त्यां, पहिलां पछे सुजोय ।
हित सुख आदि कह्यो सुरे, पिण पेच्चा पाठ न कोय ॥३०॥
पूर्व पछा ते इह भवे, द्रव्य मङ्गल कहिवाय ।
विघ्नोपशम अर्थें क्रिया, राज बेसतां ताय ॥३१॥
श्रावक तुङ्गिया ना स्थविर, वन्दन जातां कीध ।
सरिषव द्रोवाक्षत दही, द्रव्य मङ्गलीक प्रसिद्ध ॥३२॥

तिम प्रतिमा पूजे तिहां, निस्सेसाय आख्यात ।
विघ्न तणो ए मोक्ष छै, विघ्न सूं कायवूं ख्यात ॥५३॥
ए द्रव्य मंगल राज बैसतां, जे जग मांहि गिणेह ।
विघ्न पड़े नहीं राजमें, दधी अक्षत जिम जेह ॥५४॥
कोई कहै प्रतिमा तणी, पूजा थी कहिवाय ।
अनुगामिया ए कह्युं, फल तसु केड़े आय ॥५५॥
तसु कहिये धन लाय थी, काढै तसु पिण सोय ।
अणुगामिया ए इसो, पाठ सरीसो जोय ॥५६॥
जे धन काढे लाय थी, इह भव पूर्व पश्चात ।
तसु फल धन काढ्या तणूं, जिहां जाय तिहां आत।५७।
विमान अधिपती अभव्यथा, स्वर्ग तणी स्थिति मंत ।
सहु सुर्याभ तणी परै, प्रतिमादिक पूजन्त ॥५८॥
तिम पूजा प्रतिमा तणी, ए भव पूर्व पश्चात ।
तसु फल द्रव्य मंगल तणूं, जिहां जाय तिहां आत।५९।
शुभ सूचक संसार में, दधो अक्षत द्रोवादि ।
तिम पिण ए सुरलोक में, शुभ सूचक सवाद ॥६०॥
भाषा श्री जिन रायनो, गावै विवाह विषेह ।
तिम पूजा प्रतिमा तणी, वलि णमोत्थूणं गुणेह ॥६१॥
राज बेसतां कार्य्य जे, सहु ससारिक हेत ।
स्वर्ग स्थिति माटे किया, धर्म पुण्य नहीं तेथ ॥६२॥

प्रतिमा नी पूजा तिहां, लाय थकी धन वार ।
काढे तिहां पच्छा प्रथम, ते इह भव में धार ॥४३॥
जिन वन्दन पेच्चा कह्यु ं, चारित ग्रह्यां परलोग ।
ते परभव हित सुख प्रमुख, देखो दे उपयोग ॥४४॥
कोई कहै प्रतिमा तणी, पूजा छै निरदोष ।
हित सुखखम निस्सेसाए कह्यु ं, निस्सेसाय ते मोख॥४५॥
तसु कहिये धन लाय थी, काढे तसु पिण सोय ।
हित सुखखम निस्सेसाए कह्यु ं, इहां मोच स्यूं होय ।४६।
धन काढे जे लाय थी, इह भव पूर्व पश्चात ।
दारिद्र थी मूं कायवो, ते मोच दारिद्र नी ख्यात ॥४७॥
तिम पूजा मंगलिक अरथ, इह भव पूर्व पश्चात ।
विघ्न थकी मूं कायवो. ते मोच विघ्न नी ख्यात ॥४८॥
शतक पनरमें भगवती, आणंद थिवर प्रतेह ।
गोशाले जे वणिक नूं, आख्यु ं दृष्टान्त देह ॥४९॥
चौथो वल्गू फोडतां, वृद्ध पुरुष तिहवार ।
फोडक हाला पुरुष नूं, हित सुख वंछणाहार ॥५०॥
पथ्य आनन्द कारण तणूं, वंछणाहारो तेह ।
अनुकम्पा कारक तिको, निश्चय यश वन्छेह ॥५१॥
निस्सेसाए नूं अर्थ जे, आख्यो वृत्ति विषेह ।
वंछे मोचज विपतनी, विपत मूं कायवूं जेह ॥५२॥

जन जाणैं मङ्गल थकी, हित सुख प्रमुख जे पाय।
पण नहीं जाणै पूर्व बंध, पुण्य थकी ए थाय ॥७३॥
पुत्रादिक परणायवे, आरा मोसर आदि।
सुयश हुवे ते पूर्व बन्ध, पुण्ये करी सम्वाद ॥७४॥
ब्रह्मा विष्णु महेश पुन, देवी पूजा आदि।
कीधां सुख सम्पति मिलै, ते पूर्व पुण्य प्रसाद ॥७५॥
महा आरम्भ महा परग्रही, करै पंचेन्द्री घात।
मांस भक्षण ए चिहुं थकी, नरकायु बन्धात ॥७६॥
नरकि पंचेन्द्रिय पणो, पुण्य प्रकृति छे जेह।
ते तो छे पूर्व बन्ध्यो, वर शुभ जोग करेह ॥७७॥
पण महा आरम्भ आदि जे, चिहुं कारण करि जोय।
पंचेन्द्री पणूं नहीं बंधै, न्याय हिये अवलोय ॥७८॥
तिम प्रतिमा पूज्यां छतां, हित सुख प्रमुख न थाय।
पूर्व बंधे पुण्ये हुवे, हित सुखक्षम निस्सेसाय ॥७९॥
वर सुर्याभ विमान नो, अधिपती देव किंवार।
मिथ्या दृष्टि पिण हुवे, भव्याभव्य विचार ॥८०॥
जे सुर्याभे सांचवी, ते छिज रीत तिंवार।
राज बैसतां सांचवै, विमान अतिपती धार ॥८१॥
प्रतिमादिक पूजै तिके, वलि नमोत्थूणं गुणेह।
तिण सूं ए स्थिति स्वर्ग नी, मङ्गलीक हेतेह ॥८२॥

कोई कहे पूजा कियां, ए भव विघ्न मिटेह ।
पुण्य वध किम नवि कहो, हिव तसु उत्तर लेह ॥६३॥
चढ्यो सूर संग्राम में, कर बहु जन संहार ।
आव्यूं जीत फते करी, सुयश करै नर नार ॥६४॥
सावद्य युद्ध तिणे करी, अशुभ कर्म बंधाय ।
ते अशुभ कर्मैं करी, सुयश हुवै किम ताय ॥६५॥
नाम कर्म नी प्रकृति, यशो कीर्ति पुन्य जेह ।
ते तो पाछल भव बधी, वर शुभ योग करेह ॥६६॥
ते यशो कीर्त्ति पुण्य प्रकृति, युद्ध समय सुविचार ।
उदय आवी तिण कारणे, सुयश करै नर नार ॥६७॥
जन बहु जाणे युद्ध थी, सुजश थयो जग मांहि ।
पण नहीं जाणे पूर्व बध, पुण्य थकी जश पाय ॥६८॥
तुङ्गिया ना श्रावक किया, विघ्न हरण रे काज ।
दधी अक्षत द्रोवादि जे, इम हिज नेम समाज ॥६९॥
दधी अक्षत द्रोवादि करी, अशुभ कर्म बंधाय ।
विघ्न मिटे किम तेहथी, किम सुख सम्पति पाय ।७०।
विघ्न मिटै अरि जन हटे, सुख सम्पति पामेह ।
ते पुण्य प्रकृति पूर्व भवे, बंधी शुभ जोगेह ॥७१॥
ते पुण्य प्रकृति कदा, मङ्गल कियां पकेह ।
उदय आयां सुख सम्पजै, वलि बहु विघ्न मिटेह ।७२।

तथा परभवे एहवुं पाठ पिच पच्छा नहीं ॥ ४ ॥ चम्पा तथा जन वृन्द जिन वन्दन समय ए विध कही। प्रभु वन्दतां फल पेच्चा भव वा इह भव हित सुख प्रमुख ही। फुन तुङ्गिया ना श्रावक्कि पिण स्थविर वन्दन समय ही। फल वन्दना नूं इह भवे वा परभवे होसे सही ॥५॥ शिवराज ऋषिं फुन ऋषभ दत्ते कह्यं प्रभू वन्दन तणूं। फल इह भवे वा पर भवे हित सुख प्रमुख हुसे घणूं। इम जिन मुनि प्रते वन्दवे फल पेच्चा वा परभव वही। पिण पाठ पच्छा शब्द किहां ही सूत्र में दाख्यो नहीं ॥ ६ ॥

॥ इति सुर्याभाधिकार ॥

॥ अथ नवमूं चैइट्ठी निज्झराट्ठी शब्दार्थ अधिकार ॥ प्रारभ्यते ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै प्रतिमा तणी, व्यावच करवी सार।
भाखी दशमा अङ्ग में, तीजे संबर द्वार ॥ १ ॥
उत्तर तसु निसुणो हिवे, तिण ठाणे इमवाय।
आराधे ए तृतीय व्रत, ते कहवुं मुनिराय ॥ २ ॥

बहु सागर सुर सुरी तणूं, अधिपती पणो करेह।
ए पिण बच है देव नूं, देखो पाठ विषेह ॥८३॥
आयू जे सुर्याभ नूँ, च्यार पल्योपम ख्यात।
बहु सागर लग किम रहे, पेखो तज पखपात ॥८४॥

॥ गीतक छन्द ॥

प्रतिमा तणी पूजा तिहां सुर्याभ ने सुर आखियो। पुव्वी अने पच्छा हियाए आदि पाठ सुभाखियो॥ पुव्वी पच्छा ते इह भवे संसार ना मंगलीक ही। तुङ्गियादि ना जिम विघ्न हरवा। द्रोव सरसव तिम वही ॥ १ ॥ सुर्याभ जिन वन्दन तणी मन मांहि धारी छे तिहां। पेचा हियाए पाठ आदज प्रगट अन्तर ए जिहां। पेचा तिको परभव विषे हित सुख प्रमुख पहिछाणवूं। पच्छा अने पेचा उभय नुं अर्थ दिल में आणवूं ॥ २ ॥ खंधक कह्यो धन लाय थी काढे तिको चिन्ते सही। पच्छा पूराए हिया सुहाए आदि पाठ सु प्रगट ही। तिम जरा मरणज लाय थी निज आत्म प्रति काढ्यां थके। मुझ हुसी परलोकि हियाए। प्रमुख पाठ कह्या तिके ॥ ३ ॥ प्रतिमा तणी पूजा अने धन लाय थी काढे वही। पच्छा हियाए पाठ छे पिण पेचा वा परभव नहीं। सुर्याभ जिन वन्दन अने जे खन्धकि दीचा ग्रही। पेचा

प्रतिमा अन्न खाती नथी, पीती नथी ज पाण।
वस्त्र ओढती पिण नथी, नथी पहरती जाण ॥१३॥
ते माटे इम सम्भवे, चैत्य ज्ञान अर्थेह।
निरजरा नूं अर्थी छतो, करे व्यावच जेह ॥१४॥
चैत्य ज्ञान अर्थे करे, एक अर्थ ए होय।
द्वितीय अर्थ कहिए हिवै, सांभलजो अवलोय ॥१५॥
आराधे ए तृतीय व्रत, ते केहवुं मुनिराय।
इम शिष्य प्रश्न किये छतें, हिव गुरू भाषे वाय ॥१६॥
उपधि भात पाणी जिको, प्रतीत घर थी आण।
संग्रह करिवा में कुशल, कुशल दान में जांण ॥१७॥
ते केहने आपे तिको, अत्यन्त गाढो बाल।
दुर्बल रोगी वृद्ध फुन, खमग प्रवर्त्तक न्हाल ॥१८॥
आचारज उवज्झाय शिष्य, साधर्मीक पिछाण।
तपसी कुल गण संघ ए, चैत्य तिको जिन जाण ॥१९॥
पूर्व कह्या ते सर्व नूं, अर्थ प्रयोजन जेह।
निरजरानूं अर्थी छतो, करे व्यावच तेह ॥२०॥
पूजा श्लाघा रहित चित, दश विध आचार्य्यादि।
बहु विध भत्त पाणादि करि, करे अनेक प्रकार सम्वाद २१
चित्त अह्लादक ते भणी, चैत्य केवली जाण।
भात पाणी तसु आणि दे; वलि उपधादिक दे आण ।२२।

उपधि भात पाणी जिको, प्रतीत घर थी आण ।
संग्रह करिवूं कुशल वलि, कुशल दान में जाण ॥ ३ ॥
ते क्षेहने आपे तिको, अत्यन्त गाढोवाल ।
दुरवल ते वल रहित जे, वलि ग्लान मुनि न्हाल ॥४॥
वृद्ध तिको कहिये स्थिविर, खमग मास खमणादि ।
प्रवर्त्तावे जे योग्य तिम, प्रवर्त्तक ते सम्वाद ॥ ५ ॥
आचारज उवभाय फुन, नव शिष्य साधर्मीक ।
तपसो कुल गण संघ ए, तसु व्यावच तहतीक ॥ ६ ॥
कुलते गच्छ समुदाय छै, चन्द्रादिक कहिवाय ।
गण ते कुल समुदाय छै, संघते गण समुदाय ॥ ७ ॥
इतलानी व्यावच करै, चैत्य ज्ञान अर्थेह ।
निरजरानूं अरथी छतो, कर्म क्षयां थी तेह ॥ ८ ॥
पूजा श्लाघा रहित चित्त, दश विध बहु विध जेह ।
करै व्यावच तृतीय वरत, आराधे मुनि तेह ॥ ९ ॥
अप्रतीत कारी घर विषे, प्रवेश न करै जान ।
अप्रतीत कारी घर तणूं, नहीं लेवै अन्न पान ॥१०॥
इहां कह्यूं जे उपधि करि, वलि भत्त पाण करेह ।
अत्यन्त वाल प्रमुख तणी, करै व्यावच तेह ॥११॥
कोई कहै प्रतिमा तणी, व्यावच करवो ख्यात ।
तो प्रतिमा रै ये किहूं. वस्तु काम न आत ॥१२॥

भव द्रव्य देव भवान्तरै, देव हुसी ते ताय।
चक्री ते नर देव हैं, धर्मं देव मुनिराय ॥३३॥
देवाधि देव तीर्थंकरा, तिणसूं दैवत वीर।
तीन लोक ना अधिपति, युग केवल गुण हीर ॥३४॥
भाव देव चिहुं जाति ना, भवनपत्यादिक जेह।
बारम शतके भगवती, नवम उद्देश विषेह ॥३५॥
ते माटे ए चैत्य जिन, तास वेयावच ताम।
निरजरा नूं अर्थी छतो, करै मुनि गुण धाम ॥३६॥
कोई कहै ए चैत्य नूं, अर्थ इहां जिन होय।
तो छेहड़े ए किम कह्यु, तसु उत्तर हिव जोय ॥३७॥
चैत्य तुम्हे प्रतिमा कहो, तो छेहड़े किम ख्यात।
तुम लेखे तो धुर कहो, पछै अन्य मुनि आत ॥३८॥
जिन प्रतिमा जिन सारषी, तुम्हे कहो छो सोय।
ते माटे ए आदि मे, कहिवु चैत्य सु जोय ॥३९॥
इहां बाल अत्यन्त धुर, दुर्बल. ग्लान पश्चात।
स्थिवर प्रवर्तक धुर कही, पछै आचारज ख्यात ॥४०॥
आचार्य पद तो प्रथम, कहिवु धुर अहलाद।
ठाम ठाम व्यावच विषे, आचारज पद आदि ॥४१॥
इहां प्रथम बालादि कही, पछै आचारज जोय।
तेहनुं कारण को नही, देखो दिल अवलोय ॥४२॥

सूत्र भगवती में कह्यो, सीहो मुनि सुजाण।
पाक बीजोरा वीर प्रति, बहरी आण्या आण ॥२३॥
अन्य केवली तेहने, उपधादिक दे आण।
आराधै इम तृतीय व्रत, महा मुनि गुण खान ॥२४॥
राय प्रश्नेणी में कह्या, वीर तणा चिहुं नाम।
कल्याणं मंगल वलि, दैवत चैत्य सु ताम ॥२५॥
मलियागिरि कृत वृत्ति में, अर्थ इसो आख्यात।
कल्याणकारी ते भणी, कल्याणिक जगनाथ ॥२६॥
दुरित विघ्नज तेहना, उपशम कारी स्वाम।
ते माटै जगनाथ ने, कह्यो मंगलं नाम ॥२७॥
तीन लोकना अधिपति, तिणसूं दैवत ख्यात।
हेतु सु प्रश्न मन तणा, तिणसूं चैत्य संजात ॥२८॥
चैत्य शब्द नूं अर्थ इम, आख्यो छै तिण स्थान।
ते माटै ए चैत्य जिन, तास वेयावच जान ॥२९॥
मुनि ना ए पिण नाम चिहुं, आख्या छै बहु ठाम।
कल्याणकारी ते भणी, मुनि कल्याणिक नाम ॥३०॥
दुरितोपशम कारी पणै, मंगल मुनि कहिवाय।
च्यार मंगल में देखल्यो, तीजो मंगल ताय ॥३१॥
दैवत कहतां देव ए, पञ्च देवमें ताहि।
धर्म देव मुनि ने कह्या, सूत्र भगवती मांहि ॥३२॥

तिगाहिज अध्ययने किया, रुचि दर्शन ज्ञान चरित्त।
इहां दर्शन धुर आखियो, तसु कारण न कथित्त ॥५३॥
अभिणि बोधिक धुर कही, पछे कह्यो श्रुत ज्ञान।
भगवती आदि विषे प्रभू, प्रगट पाठ पहिछान ॥५४॥
उत्तराध्ययन अट्ठबीस में, कह्यो प्रथम श्रुत ज्ञान।
अभिणि बोध कह्यो पछै, तसु दोषण नहीं जान ॥५५॥
पूर्वानु पूर्वी किहां, किहां द्वितीया अवलोय।
अनानु पूर्वी कही किहां, तसु दोषण नहिं कोय ॥५६॥
पञ्च ज्ञान में देख लो, छेहड़े केवल ज्ञान।
छेहड़े दर्शन च्यार मे, केवल दर्शन जान ॥५७॥
च्यार ध्यान मांही वलि, छेहड़े शुक्ल ध्यान।
छेहड़े गुणठाणा मझै, अजोगी गुण स्थान ॥५८॥
छेहड़े चिहुं विध देव मे, बैमानिक सुर ख्यात।
चारित्र में छेहड़े कह्यु, यथाख्यात जगनाथ ॥५९॥
वलि षट नियट्ठा ने विषे, छेहड़े स्नातक जान
इत्यादिक बहु सूत्र में, भाख्या श्री भगवान ॥६०॥
अनानु पूर्वी करी, इहां चैत्य जिन अन्त।
उपधि भात पाणी करी, तसु व्यावच मुनी करन्त ॥६१॥
आराधै इम तृतीय व्रत, महा मोटा मुनिराय।
द्वितीय अर्थ ए आखियो, निमल विचारो न्याय ॥६२॥

तिमहिज अ ते चेत्य जिन, इहां आख्यु छै सोय ।
तेहनुं पिण कारण नहीं, हिये विचारी जोय ॥४३॥
मुनि सहचारी पणा थकी, प्रथम कह्या अणगार ।
पछे चैत्य ते जिन कह्या, तसु नहीं दोष लिगार ॥४४॥
गिणूं अनुपूर्वी तुम्हे पद, तसु इकबीस वीस ।
पच्छानु पूर्वी विषे, पहला मुनि जगीश ॥४५॥
उवझाया आचार्य सिद्ध, अरिहन्त अन्त कहेह ।
अनानु पूर्वी विषे, आघा पाछा लेह ॥४६॥
अनुयोग द्वारे आखियो. पूर्वानु पूर्वी जान ।
पच्छानु पूर्वी वलि, अनानु पूर्वी आन ॥४७॥
पूर्वानु पूर्वी तिहां, ऋषभ जाव वर्द्धमान ।
महावीर यावत् ऋषभ, पश्चानु पूर्वी जान ॥४८॥
आघा पाछा नाम ले, अनानु पूर्वी तेह ।
ए त्रिहुं अनु पूर्वी कही, देखोजो चित देह ॥४९॥
सामाचारी दश विध कही, अनुयोग द्वार विषेह ।
इच्छा मिच्छा धुर अखी, पूर्वानु पूर्वी एह ॥५०॥
उत्तराध्ययन छब्बीस में, आवस्सिया धुर जोय ।
अनानु पूर्वी एह छै, तसु दोषण नहीं कोय ॥५१॥
ज्ञान दर्शन चारित्र तप, शिव मग ए चिहुं सार ।
उत्तराध्ययन अट्ठवीस में, प्रथम ज्ञान सुविचार ॥५२॥

इम चिन्तव अवधे करी, प्रभु कहै मुज प्रति देख।
शीघ्र गमन कर संचर्‍यो, वज्र प्रते सुविसेख ॥ ७ ॥
इहां तिहुं शरणा में प्रथम, अरिहन्त केवल धार।
अरिहन्त चैत्य छद्मस्थ जिन, चिहुं ज्ञानी सुविचार । ८ ।
भावितात्म अणगार फुन, यह तिहुं शरणे मन्त।
इहां चैत्य ते ज्ञानवन्त, चिहुं ज्ञानी भगवन्त ॥ ९ ॥
वलि मन शक्र विचारियो, अरिहन्त नी अवलोय।
भगवन्त ने अणगार नी, अति आशातन होय ॥१०॥
चैत्य स्थान भग शब्द कह्यो, भग नुं अर्थ सुज्ञान।
चिहुं ज्ञानी अरिहन्त ए, पिण प्रतिमा नहिं जान ।११।
कोई शरण तो त्रण कहै, आशातन कहै दोय।
अरिहन्त ने प्रतिमा तणी, एक कहै छै सोय ॥१२॥
शरण विषै तो पाठ त्रण, आशातन में जोय।
दोय पाठ दाख्या हुंता, तो आशातन बे होय ॥१३॥
शरण विषै तो पाठ त्रण, आशातन में जोय।
तीन पाठ छै ते भणी, आशातना त्रण होय ॥१४॥
प्रत्यक्ष सूत्रे शरणा तिहुं, कही आशातना तीन।
अरिहन्त ने भगवन्त नी, वलि मुनि तणी कथीन ॥१५॥
तीन आशातन ने विषे, चैत्य शब्द नहीं ख्यात।
चैत्य ठिकाणे भग कह्युं, देखो तज पखपात ॥१६॥

चैत्य ज्ञान धुर अर्थ कह्यं, द्वितीय अर्थ जिन जोय ।
वलि केवल ज्ञानी वदै, तेहिज सत्य सुहोय ॥६२॥

॥ इति चैइट्ठी निज्झाराट्ठी शब्दा नूं अर्थ ॥

॥ अथ दशमूं चमर सुधर्मागत अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै असुरेन्द्र जी, स्वर्ग सुधर्मे जाय ।
त्यां प्रतिमा नूं शरण कह्यं, तसु उत्तर कहिवाय ॥ १ ॥
सूत्र भगवती तृतीय शत, द्वितीय उद्देशा मांय ।
चमर वीर नूं शरण ले, स्वर्ग सुधर्मे जाय ॥ २ ॥
जई सुधर्मे शक्र प्रति, बोल्यो विरुई वान ।
शक्र कोप कर मूंकियो, वज्र सु जाज्वलमान ॥ ३ ॥
पछे इन्द्र विचारियो, विन नेश्राय सुजोय ।
आवे चमर सुधर्म ए, इसी शक्ति नहिं होय ॥ ४ ॥
अरिहन्त अरिहन्त चैत्य पुन, भावितात्म अणगार ।
आवे ए तिहुं शरण ले, चमर सुधर्मे धार ॥ ५ ॥
ते माटै महा दुःख ए, अरिहन्त नों अवलोय ।
भगवन्त नै अणगार नी, अति आशातन होय ॥ ६ ॥

ते माटे अरिहन्त नी, प्रतिमा नी अवलोय।
शरण कहे छे ते इहां, नथी संभवे सोय ॥२७॥

॥ इति चमर सुधर्मागत अधिकार ॥

॥अथ इग्यारमूं वली कम्मा अधिकार॥

॥ दोहा ॥

कोई कहे वली कम्म शब्द, सूत्र विषे बहु स्थान।
तेह तणुं स्युं अर्थ है, हिव तसु उत्तर जान ॥ १ ॥
पञ्चमुद्देशे द्वितीय शत, तुङ्गिया तणा विचार।
श्रावक स्थिविर सु वांदवा, त्यार थया तिह वार ॥ २ ॥
स्नान करी वली कर्म कृत, तास अर्थ वृत्तीकार।
कीधो छे गृहदेवता, देखो हिये विचार ॥ ३ ॥
इमही उववाई में कह्यो, प्रवृत्ति वादुका कोध।
वलि कर्म ख गृहदेवता, वृत्ती विषे सु प्रसिद्ध ॥ ४ ॥
केइक इहां गृहदेवता, जिन प्रतिमा कहे हेव।
पिण इतलो जाणे नहीं, ए किम घरना देव ॥ ५ ॥
तीर्थंकर तो छै सही, तीन लोक ना देव।
ते किम जिन प्रतिमा भणी, घरना देव कहेव ॥ ६ ॥
जिन प्रतिमा जिन सारखी, इम पिण कहता जाय।
वलि स्थापे घर देवता, ए किण विध मिलसे न्याय ॥ ७ ॥

अरिहन्त ने प्रतिमा तणो, मुनिनो शरण सु थाय।
तो छद्म जिन नुं शरण ग्रह्यु, ते किण शरणा मांय ।१७।
अरिहन्त तो केवल धरा, तेह विषे सुविचार।
जिन छद्मस्थ तणो शरण, आवे किण विध सार ॥१८॥
जिन प्रतिमा नुं शरण कहे, तिण मे पिण नहीं आय।
तृतीय शरण जिन विन मुनि, किम तिण विषे कहाय ॥१९॥
तिण सुं छद्म जिन तणूं, द्वितीय शरण ए होय।
जो प्रतिमा नुं शरण हुवे, तो किम आवे मनु लोय ॥२०॥
सभा सुधर्मां थी निकट, सिद्ध आयतन जाय।
जिन प्रतिमा नुं शरण तो, ग्रहण करन्तो ताय ॥२१॥
ते माटे इहां चैत्य नुं, अर्थ ज्ञान अवलोय।
अन्य ठाम पिण चैत्य नुं, अर्थ ज्ञान कह्यु सोय ॥२२॥
चौवीस तीर्थंकर तणा, चैत्य रूंख चौवीस।
समवायङ्ग विषे कह्या, ए ज्ञान रूंख सु जगीस ॥२३॥
चैत्य ज्ञान केवल लह्यु, जिण तरु तल जिनराय।
चैत्य वृक्ष ए जाणवा, ए ज्ञान वृक्ष कहिवाय ॥२४॥
तिमहिज अरिहन्त चैत्य प्रति, चिहुं ज्ञानी अरिहन्त।
द्वितीय शरण ए जाणवो, देखोजी मतिवन्त ॥२५॥
द्वितीय आशातन ने विषे, चैत्य स्थान भगवन्त।
इहां अर्थ के भग तणो, कहिए ज्ञान सुतन्त ॥२६॥

॥ सोरठा ॥

मल्ली पिता ने पास रे, आवन्ता न्हाया कह्या।
जाव शब्द में तास रे, वली कम्मा ए पाठ छे ॥१८॥
वलि मल्ली षट राजान रे, समभावा आवी तदा।
जाव शब्द में जान रे, वली कम्मा ए पाठ छे ॥१९॥
देखो मल्ली भगवान रे, प्रतिमा पूजी केहनी।
अध्ययन अष्टम् जान रे, आख्यो ज्ञाता ने विषै ॥२०॥
वलीकम्मा नूँ जाण रे, अर्थ कहे पूजा तणो।
ए जिन प्रतिमा नी माण रे, के पूजा कुल देव नी ॥२१॥
जो स्थापे जिन बिम्ब रे, तो मल्ली तीर्थंकर हुतां।
पूजे तेह अचम्भ रे, वलि प्रतिमा किण जिन तणी ॥२२॥
जिन प्रतिमा नी ताय रे, मल्ली नाथ पूजा करी।
तो भावे मुनि पाय रे, देखी प्रणमे के नहीं ॥२३॥
वलि अढाद्वीप रे म्हांय रे, भावे जिन उत्कृष्ट थी।
इक सौ सित्तर थाय रे, जघन्य वीस थी नवि घटे ॥२४॥
त्यां द्रव्ये जिन घर माय रे, भावे जिन वंदे के नहीं।
वलि तसु माण सुहाय रे, तसु लेखे किम नहिं सुणे ॥२५॥
मलिनाथ घर मांहि रे, जिन प्रतिमा पूजी कहै।
तो द्रव्ये जिन पिण ताहि रे, भावे जिन वन्दे न किम।२६

कदापि कुल देवी प्रते, कहिये घर ना देव।
लोकीक हैते पूजता, श्रावक पिण स्वमेव ॥ ८ ॥
जेह देवता शब्द नित, स्त्री लिङ्ग वाची होय।
कह्यु अमर में ते भणी, न्याय हिये अवलोय ॥९॥
नवम उद्देशै सप्तशत, वर्ण कीध वली कर्म।
अर्थ देवता नूं कियो, वृत्ति विषे ए मर्म ॥१०॥
वली कर्म नु अर्थ धर्मसी, स्नान तणो ज विशेष।
कीधो वलि कर्म शब्द करी, आया कारज शेष ॥११॥
ज्ञाताध्ययने दूसरे, सुत वंच्छा ने हेत।
नाग भूत यच्च पूजवा, गई सुभद्रा तेथ ॥१२॥
पुष्करणी में स्नान कर, कीधा वली कर्म जोय।
ए वाव मधे किण देवनी, प्रतिमा पूजी सोय ॥१३॥
भीनी साडी ओडणे, एहवी छतीज तेह।
कमल वहु ग्रही नीकली, पुष्करणी थी जेह ॥१४॥
वहु पुष्प गन्ध धूपणो, माल्य प्रमुख अवलोय।
कांठे जे मूक्या प्रथम, तेह ग्रही ने सोय ॥१५॥
पछे नाग घर आय ने, प्रतिमा पूजी आम।
जाव वे श्रमण नी वलि, पूजी आखी ताम ॥१६॥
वली कर्म पुष्करणी विषे, कीधो धुर आख्यात।
ते पुष्करणी ने विषे, किसा देवनी जात ॥१७॥

पहलां तो न्हावो कह्यो, पछे कह्यु वलि कम्म ।
पछे वस्त्र पहर्या कह्या, हिव जोवो ए मम्म ॥३६॥
स्त्री जाति सुभाव नग्न, थई न्हावा बेठी जेह ।
त्यां न्हावा ना घर विषे, किहवो पूज्यो देव ॥३७॥
वली कर्म कर जिन घर विषे, प्रतिमा पूजी आय ।
तो वली कर्म मंजन घरे, ते किहनी प्रतिमा थाय ॥३८॥

॥ सोरठा ॥

अभात चिलाती न्हाय रे, कय वलि कम्मा पाठ त्यां ।
जम्बूद्वीप पन्नती मांय रे, किसो देव त्यां पूजियो ॥३९॥

॥ दोहा ॥

कोणिक जिन बन्दन गयो, कह्यो स्नान विस्तार ।
वली कम्म शब्द ज मूलगो, नथी तिहां अवधार ॥४०॥

॥ अथ कोणिक जिन बंदवा गयो त्यां न्हावा नूं पाठ उववाई सूत्र में कह्यो ते लिखिये छै ॥

जेणेव मज्झण घरे तेणेव उवागच्छइ गच्छइत्ता मज्झन घरं अणुप्पविसइत्ता समुत्ताजाला उलाभिरामे विचित्त मणिरयण कुट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाण मंडवं सि णाणामणिरयण भत्ति चित्तं सि ण्हाण पीढंसि सुहणिसणे सुद्धोदगेहिं गंधोदगेहिं पुप्फोदगेहिं सुभोदगेहिं पुणोरकल्लाणग पवरमज्झण विहिए मज्झिएतत्थ कोउयसएहिं बहुविहेहिं कल्लाणगपवर मज्झणावसाणे पम्हल सुकुमालगंध कासाइय लूहियंगे सरस सुरहि

जो स्थापै कुल देव रे, मल्लिनाथ पूजा करी ।
सुर सहाय स्वयमेव रे, किम न करै श्रावक समकिती ॥२७॥
स्नान तणुं ज विशेष रे, अर्थ कहै वली कर्म नूं ।
तो टलियो क्लेश अशेष रे, सहु ठाम विशेष स्नान नूं ॥२८॥

॥ दोहा ॥

भगवती नवमां शतक मे, तेतीस में उद्देश ।
जमाली मंजन घरे, स्नान वली कर्म शेष ॥२९॥
अलंकार कर नीकल्यो, मंजन घर थी हिम ।
दूजा न्हावा ना घर विषे, कीहवो पूज्यो देव ॥३०॥
देवा नन्दा ब्राह्मणी, वली कर्म मजन गेह ।
तिण न्हावा ने घर किसो, पूज्यो देव कहेव ॥३१॥
द्वितीय उपाङ्ग प्रदेशी नृप, देव पूजवा जाय ।
पहिलां न्हावा घर विषे, वली कर्म कीधो ताय ॥३२॥
दूजा न्हावा ना घर विषे, किसो पूजियो देव ।
देव पूजवा तो हिवे, जावै छै स्वयमेव ॥३३॥
ज्ञाताध्ययने सोल मे, द्रौपदी मंजन गेह ।
स्नान वली कर्म कौतुकः, प्रवर वस्त्र पहरेह ॥३४॥
मंजन घर सुं नीकली, आवी जिन घर मांय ।
इतरा सूधी पाठ छै, देख विचारो न्याय ॥३५॥

हत्तिकार कह्यु सोय रे, वली कर्म ते गृह देवता ।
तसु पूजा अवलोय रे, इहां कुल देवी सम्भवे ॥४६॥
स्नान विशेषण होय रे, वा पूजी ग्रह देवता ।
उभय अर्थ अवलोय रे, सत्य सर्वज्ञ वदे तिको ॥४७॥

॥ अथ असहेजाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

वलि कहे श्रावक समकिती, च्यार जाति ना देव ।
तास साझ वंछे नहीं, सूत्र विषे ए भेव ॥४८॥
ते माटे वली कर्म ते, जिन प्रतिमा पूजन्त ।
पिण कुल देवी अर्थ नहिं, इव तसु उत्तर मन्त ॥४९॥

॥ सोरठा ॥

असहेज्जा पाठ नूं आण रे, अर्थ दोय है वृत्ति में ।
आपद पड्यां सुजाण रे, साझ न वंछे देव नूं ॥५०॥
पोते कीधा पाप रे, ते पोतेहिज भोगवे ।
अदीन मनोवृत्ति व्याप रे, एक अर्थ तो इम कियो ॥५१॥
वलि पाखंडी आय रे, चलावे समकित आदि थी ।
तो नहीं वंछे सहाय रे, समर्थ स्वयमेव हटायवा ॥५२॥
वलि जिन शासन मांय रे, अत्यन्त भावित वासता ।
ते माटे असहाय रे, अर्थ दूजो इम वृत्ति में ॥५३॥

गोसीस चंदणोगु लित्तगत्ते अहय सु महग्घ दूसरयण सु संवए सुइ माला वण्णग विलेवण आविद्ध मणि सुवणे कप्पिय हारद्धहार तिसरय पालंब पलंबमाणे कडिसुत्त सुकय सोहे पिणद्धगे विज्झे अङ्गुलिज्जे कल लियंगयं ललियं कया भरणे वरकडंग तुडिय थंभियभूय अहिय रूवसस्सिरीया मुद्दिया पिंगलंगुलिय कुंडल उज्जोवियाणणे, मउड दित्त सरए हारोत्थए सूकयर इयव धत्थे पालंब पलंबमाण पडसुकय उत्तरिज्झे णाणामणि कणगरयण विमलमहरि हणिउणा वियमि समसंति विरइय सु सिलिट्ठ विसिट्ठ लट्ठ आविद्ध वीर वलये किं बहुणा कप्परूखए चेव अलंकिय विभूसिए णरवई सकोरंट मल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्झ माणेणं चउ चामर वालवीजयंगे मंगल जय सद्द कयालोए मज्झण घराउ पडिणिक्ख मइमझ २ त्ता ॥ इति ॥

॥ सोरठा ॥

वली कर्म शब्दे जेह रे, पूजा जिन प्रतिमा तणी ।
तो कौणिक अधिकारेह रे, जिन वंदन समय ए न किम ॥
जम्बूद्वीप पन्नती एम रे, भरतेश्वर ना स्नान नूं ।
विस्तार कौणिक जेम रे, त्यां वली कम्मा पाठ नहीं ॥४२॥
स्नान तणो जिन स्थान रे, विस्तार पणे नवि वरणव्यूं ।
त्यां वली कम्मा जान रे, पाठ देख निरणय करो ॥४३॥
जलाञ्जलि प्रमुख रे, स्नान करंतो जे करे ।
कुरलादिक प्रत्यक्ष रे, स्नान विशेषण एह छे ॥४४॥
ते माटे अवलोय रे, वली कम्मा जे पाठ नूं ।
स्नान विशेषण सोय रे, अर्थ धर्मसी इम कियो ॥४५॥

तास अर्थ वृत्ति मांय रे, एक ईज कीधो अछै।
आपद सुर असहाय रे, एह अर्थ कीधो नथी ॥६४॥
कुतीर्थिक प्रेरित्त रे, समकित सी अविचल पणो।
पर सहाय नवि चित्त रे, उववाई वृत्ति में कह्यो ॥६५॥
राय प्रश्नेणी वृत्ति रे, असहेज्झा नूं अर्थ ओ।
कीधो अधिक पवित्त रे, चित्त लगाई सांभलो ॥६६॥
कुतीर्थिका प्रेरित रे, समकित सी अविचल पणो।
पर सहाय नवि चित्त रे, यह अर्थ इक हिज तिहां ॥६७॥
आपद सुर असहाय रे, यह अर्थ कीधो नथी।
कुतीर्थिक थी ताहि रे, न चले एहिज अर्थ त्यां ॥६८॥
आनन्दादिक सार रे, असहेज्झा पाठ कह्यो तिहां।
छः छण्डी आगार रे, देवाभिउगे पाठ में। ॥६९॥
अन्य तीर्थी ने धार रे, तथा देव जे तेहनां।
ग्रह्या भ्रष्ट अणगार रे, अन्य तीर्थी ग्रह्या तेहने ॥७०॥
न करूं वन्दना ताहि रे, नमस्कार पिण नहिं करूं।
पहलां बोलूं नांहि रे, अशणादिक देवूं नहीं ॥७१॥
अभिग्रह एह विशेष रे, छः छण्डी आगार त्यां।
राजा ने आदेश रे, तथा कुटम्ब आदेश थी ॥७२॥
बलवन्त तणे प्रयोग रे, देव तणे परवश पणे।
कुटम्ब बडा ने योग रे, अटवी विषेज कारणे ॥७३॥

तुङ्गिया नै अधिकार रे, उभय अर्थ ये आखियो।
तास न्याय सुविचार रे, चित्त लगाई सांभलो ॥५४॥
दूजो अर्थ पहिछाण रे, समकित व्रत सैंठा पणो।
प्रवर मूल गुण जाण रे, एह अवश्य गुण चाहि जे ॥५५॥
ए गुण खण्डित थाय रे, तो हुवै विराधक पांति में।
शुद्ध हुवां सुं ताय रे, आराधक पद आखियो ॥५६॥
जो पाखण्डी नै जेह रे, जाव देवा समरथ नहीं।
पर सहाय बिन तेह रे, तासु चलायो नवि चलै ॥५७॥
तो पिण मूल गुण तास रे, तेहनुं न गयुं सर्वथा।
समकित व्रत नी राश रे, अखण्ड पणे राखी तिणे ॥५८॥
आपद पडियां आय रे, सुर सहाय बंछै नहीं।
ए धुर अर्थ कहाय रे, उत्तर गुण ते जाणवूं ॥५९॥
मुनि धुर पहिर सझाय रे, द्वितीय पहिर में ध्यान वर।
तृतीय गोचरी जाय रे, चौथे पहिर सझाय फुन ॥६०॥
उत्तर गुण ए च्यार रे, कह्या विचक्षण मुनि तणे।
ज्यो न करै अणगार रे, तो संयम में भङ्ग नहीं ॥६१॥
तिम श्रावक रै एह रे, उत्तर गुण असहायता।
सुर सहाय बंछेह रे, तो समकित में भङ्ग नहीं ॥६२॥
सूत्र उववाई मांहि रे, अम्बड नै अधिकार पिण।
जाव शब्द में ताहि रे असहेज्जा ए पाठ है ॥६३॥

कृष्ण पिण सुविशेष रे, लघु बधव रै कारणै।
देव आराध्यो देख रे, अन्तगड मांही कह्यो ॥८४॥
चक्री भरत सु सोय रे, देवी देव भणी तिणे।
जम्बूद्वीप पन्नत्ती जोय रे, अट्ठम करि आराधियो ॥८५॥
वलि मूक्या छः बाण रे, नमस्कार सुर ने लिख्यो।
ए प्रत्यक्ष ही पहिछाण रे, वन्छ्यो सहाय देवनूं ॥८६॥
वलि चक्री भरतेश रे, चक्र तणी पूजा करी।
इमहिज सुर सम्पेख रे, पूजे स्वार्थ कारणै ॥८७॥
शान्ति कुंथु अरि जाण रे, चक्र रतन पूज्यो कै नां।
खट खण्ड साधत माण रे, अट्ठम तेर किया कै नां ॥८८॥
लवण सुट्ठियो देव रे, कृष्ण पिण आराधियो।
ज्ञाता सोलम भेव रे, सुर सहाय बंछ्यो तिणे ॥८९॥
पूर्वोक्त पहिछाण रे, देव सहायज बान्छवे।
सम्यक् दृष्टि जाण रे, सावद्य लोकिक कृत करै ॥९०॥
समकित तास न जाये रे, नहीं जाय श्रावक पणो।
जो सुर पूजे नांहि रे, तो गुण अधिकेरो अछै ॥९१॥
नारद मेरा पाय रे, द्रुपद सुता प्रणम्या नथी।
ए गुण छे अधिकाय रे, पिण पांडू प्रणमत करी ॥९२॥
जाव शब्द रे मांहि रे, कृष्ण पिण नारद भणी।
प्रणमत कीधी ताहि रे, पिण तसु समकित नवि गई॥९३॥

ए खट तणै प्रकार रे, अन्य तीर्थादिक बिहुं भणी ।
वन्दै करि नमस्कार रे, अशणादिक दे तेहने ॥७४॥
आपद उपजै आय रे, अथवा तेहना भय थकी ।
वांछे देव सहाय रे, जाणै सावद्य तेहने ॥७५॥
तसु समकित किम जाय रे, समकित तो श्रद्धा अछै ।
हिये विचारो न्याय रे, श्रद्धा कार्य्य जुवा जुवा ॥७६॥
छः छण्डी बिन त्याग रे, ए पिण गुण अधिकाय छै ।
अधिकेरो वैराग रे, व्रत सांकडा जेहनां ॥७७॥
इक त्रस ना पच्चखाण रे, कीधां से श्रावक हुवे ।
शतक सतरमें जाण रे, द्वितीय उद्देशे भगवती ॥७८॥
अनर्थ दण्ड परिहार रे, ए आठमूं व्रत है ।
अर्थ तणो आगार रे, न्याय हिवे तेहनुं सुणो ॥७९॥
अर्थ दण्ड में एह रे, आठ आगारज आखिया ।
द्वितीय सुयगडांगेह रे, द्वितीय उद्देशे देखल्यो ॥८०॥
आत्म ज्ञात घर तेथ रे, परिवार ने मित्र कारणे ।
नाग भूत यक्ष हेत रे, हिन्सादिक आरम्भ करे ॥८१॥
अर्थ दण्ड रै मांहि रे, ए आठूं ही आखिया ।
नाग भूत यक्ष ताय रे, श्रावक रै आगार छै ॥८२॥
धारणी नो तिहवार रे, अकाले घन डोहला अर्थ ।
देखो अभय कुमार रे, ज्ञाता सुर आराधियो ॥८३॥

॥ अथ १२ मूं यात्रा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

यात्रा शेत्रुंजादि नीं, करवी केइक ख्यात।
पिण ए यात्रा सूत्र में, कही नथी जगनाथ ॥ १ ॥
शतक अठारमें भगवती, दशमें उद्देशे सार।
सोमल पूछ्या वीर प्रते, प्रश्न यात्रादि प्रकार ॥ २ ॥
हे भगवन्त ! स्यूँ थांहिरे, यात्रा अधिक उदार।
इम सोमल पूछ्यां थकें, उत्तर दे जगतार ॥ ३ ॥
जिन भाखे सुण सोमिला, छै मांहरे सुखकार।
तप अशणादिक नियम, तेह अभिग्रह सार ॥ ४ ॥
संयम वलि सज्झाय ते, धर्म कथादिक जाण।
ध्यान आवश्यक आदि वर, जोग विमल पहिछाण ॥ ५ ॥
ए पूर्वं कह्या तेहने विषे, जयणा प्रते राखे जेह।
ते मांहरे यात्रा अछे, कह्या पवर वच एह ॥ ६ ॥
पिण शत्रुञ्जयादिक तणी, जिन यात्रा कही नांहि।
देखोजी देखो तुम्हे, देखो हिवडा मांहि ॥ ७ ॥

॥ सोरठा ॥

वृत्ती विषे इम वाय रे, यद्यपि प्रभू केवल पणे।
आवश्यकादि ताय रे, बोल केइक नहीं छै तसु ॥ ८ ॥

प्रत्यक्ष ही पहिछाण रे, समदृष्टि श्रावक तिके ।
शीश नमावे जाण रे, म्लेछ ना राजा प्रते ॥६४॥
तिमहिज डरता ताय रे, अथवा स्वार्थ कारणे ।
प्रणमैं सुर ना पाय रे, ते मार्ग लोकीक छै ॥६५॥
ते माटे पहिछाण रे, पाखण्डी थी नवि चलै ।
दृढ़ आसता जाण रे, मूल अर्थ असहेज्झ नूं ॥६६॥
वलि जे कहै तुम वाणि रे, सुर सहाय नहीं वञ्छणो ।
तो चौवोस जिनना जाण रे, चौवीस यक्ष यक्षणी कहै ॥
शासण देव सहाय रे, तसु थुई पडिक्कमणे पढ़ै ।
वलि शेत्रुंजे ताय रे, पूजे कीम चक्रेश्वरी ॥६८॥
तथा यती यक्षां प्रत्यक्ष रे, काला गोरा भैरवे ।
माणभद्र दिक यक्ष रे, आराधै रक्षा भणी ॥६६॥
ए लेखै तो जोय रे, सहाय देवनो वञ्छवे ।
निज श्रद्धा अवलोय रे, तुम गुरू पिण नहीं समकिती॥
पूजे भैरव आदि रे, श्रावक परणीजै तदा ।
शीतलादिक अह्लाद रे, तुझ लेखै नहीं श्रावक पणो॥
तिणसूं देव सहाय रे, लौकिक खातै वञ्छता ।
सम्यक्त तास न जाय रे, नहीं जावै श्रावक पणो ।१०२।

॥ इति असहेज्झाधिकार ॥

शेतुंज्भे पव्वए सिद्धे, सूत्र में इम गिरि ख्यात।
पिण शेत्रुञ्जे तीर्थ सिध, इम न कह्यो गणि नाथ ॥१८॥
जागां भलाहदी जाणि ने, कीधा तिहां संथार।
बन्दनीक तो गुण अछे, जोवो हिये विचार ॥१९॥
जीव रहित तनु तेहनु, ते पिण नहिं बन्दनीक।
तो जागां बन्दनीक किम, न्याय विचारो ठीक ॥२०॥
नाज खला थी ले करी, घाल्यो जे कोठार।
सूना खला लारे रह्या, चाटे तेह गिमार ॥२१॥
हुण्डी जे लाखां तणी, सिकारता जे स्थान।
काल कीतले शेठजी, छोडी तेह दुकान ॥२२॥
हिव हुण्डी सिकरे नहीं, तेह दुकाने जोय।
तिम शेत्रुञ्जादिक विषे, जिन मुनि सिद्धा सोय ॥२३॥
हिव ते पर्वत ने विषे, हुण्डी तणूं ज सोय।
सिकारण वालो नहीं रह्यो, बन्दनीक किम होय ॥२४॥
बन्दनीक जो गिर हुवे, तो तिण ऊपर ताय।
पग दीधां आशातना, हुवे तुभ श्रद्धा न्याय ॥२५॥
द्वीप अढाई ने विषे, दोय समुद्र विशेह।
सहु ठामे सिद्धा मुनी, पन्नवणा सोलम एह ॥२६॥
जिहां एक सिधा तिहां, सिधा मुनि अनन्त।
सूत्र उववाई ने विषे, भाख्यो श्री भगवन्त ॥२७॥

तथापि तप नियमादि रे, तसु फल ना सद्भाव थी।
तप नियमादि संवाहिं रे, कहिये फल ते आसरी ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

द्रुमहिज पुष्फिया उपाङ्ग में, तृतीय अध्ययन मझार।
पार्श्वनाथ भगवन्त प्रते, सोमल विप्र जिवार ॥१०॥
प्रश्न यात्रादिक पूछिया, तप नियमादि प्रवृत्ति।
पार्श्व प्रभू यात्रा कही, पिण गिरि नी न कथित्त ॥११॥
ज्ञाताध्ययने पंचमें, मुनि स्थावरचा पूत।
तेह प्रते शुक पूछिया, प्रश्न यात्रादि प्रभूत ॥१२॥
हे भदन्त! यात्रा किसी, शुक पूछे ए सार।
कह्युं थावरचा पुत्र इम, जे शुभ ज्ञान उदार ॥१३॥
दर्शन चारित्र तप वलि, संयम आदि विचार।
योगे यत्नो जीवनी, ए शुभ यात्रा धार ॥१४॥
इहां पिण यात्रा एह ही, ज्ञानादिक नी जोय।
पिण शेत्रुञ्जा आदि नी, यात्रा न कही कोय ॥१५॥
उत्तराध्ययन सु बारमें, हरिकेशी प्रति सार।
विप्र पूछियो थांहिरे, कुंण द्रह तीर्थ उदार ॥१६॥
धर्म रूप मुनि द्रह कह्यो, ब्रह्मचर्य अवलोय।
तीर्थ शान्तिकारी कह्यो, पिण गिरने न कह्यो कोय ॥१७॥

॥ सोरठा ॥

तीर्थ आगम धार रे, अमर कोष में आखियो ।
तीजा काण्ड मझार रे, थांतत वर्गे जाणवो ॥ ६ ॥
निपान आगम जेह रे, ऋषि सेव्यो जल गुरु विषे ।
ए चिहुं अर्थ विषेह रे, तीर्थ शब्द कह्यो तिहां ॥ ७ ॥

॥ श्लोक ॥

निपानाऽऽगमयो तीर्थ मृषि जुष्ट जले गुरौ ॥
इत्यमर तृतीय काण्डे थांतत वर्गे ॥

॥ सोरठा ॥

तीर्थ शास्त्र अवधार रे, हेम अनेकार्थे अख्यूं ।
द्वादश नाम मझार रे, प्रथम नाम ए आखियो ॥ ८ ॥

॥ श्लोक ॥

तीर्थे शास्त्रे १ गुरौ २ यज्ञे ३ पुण्य क्षेत्रा ४ वतार
यो ५ ऋषि जुष्टे ६ जले मंत्रिएयु ७ माये ८ स्त्री
रजस्यपि ९ ॥ योनौ १० माले ११ दर्शनेषु १२ ॥

॥ इति हेम अनेकार्थे ॥

॥ सोरठा ॥

विश्व कोष रे मांहि रे, तीर्थ नाम कह्यु शास्त्र नूं ।
नव नामा में ताहि रे, प्रथम नाम ए पेखिये ॥ ९ ॥

इण लेखे तुझ वन्दवा, अढीद्वीप अवधार।
फुन वे द्धि प्रति वन्दवा, त्यां सिधा अणगार ॥२८॥
ते माटै वन्दनीक छै, जिन मुनि महा गुणधार।
पिण स्थानक वन्दनीक नहीं, वारुं न्याय विचार ॥२९॥

॥ इति यात्रा अधिकार ॥

॥ अथ १३ मूं इकीस हजार वर्ष तीर्थ रहसी ते अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

सूत्र भगवती में कह्यो, बीसम् शतक विषेह।
अष्टमुद्देशक वीर प्रति, गोयम प्रश्न करेह ॥ १ ॥
जम्बूद्वीप ना भरत में, ए अवशर्पिणी मांहि।
काल कीतलुं आपरो, तीर्थ रहिस्यै ताहि ॥ २ ॥
जिन कहै जम्बू भरत में, एह अवशर्पिणी मन्त।
वर्ष सहस्र इकवीस मुझ, तीर्थ रहिस्यै तन्त ॥ ३ ॥
तीर्थ कहिजै कीहनै, इम को प्रश्न करेह।
तसु उत्तर तीर्थ तीको, आगम सूत्र कहेह ॥ ४ ॥
वर्ष सहस्र इकवीस लग, रहिस्ये सूत्र उदार।
बहु ठामे जे तीर्थ नुं, सूत्र अर्थ सुविचार ॥ ५ ॥

तीर्थ प्रवचन सार रे, तेहना अव्यतिरेक थी।
संघ तीर्थ सुविचार रे, तसु कर्ता तीर्थङ्करा ॥१३॥

॥ अत्र टीका ॥

तरंति तेन संसार सागरमिति तीर्थं प्रवचनं तद्ऽव्यतिरे काञ्चेह संघः तीर्थं तत करण शीलत्वा तीर्थंकरः।

॥ एहनुं अर्थं वार्तिका करिइं कहै छे ॥

तिरै तिणकरी संसार सागर इति तीर्थ ते तीर्थ ने करिवा नो शील पणा थकी तीर्थंकर कहिये, इम भगवती नी वृत्ति में नमोत्थूणं में तित्थगउ नो अर्थ कियो, इमहिज समवायंग नी वृत्ति ने विषै जाणवो, इहाँ तीर्थ नाम प्रवचन सूत्र नुं कह्यु, ते पाठ अर्थ रूप सूत्र साधू साध्वी आधारे रह्या छे अने अर्थ रूप सूत्र श्रावक श्राविका ने आधारे रह्यो छे ते सूत्र तीर्थ तो आधेय छे अने चतुर्विध संघ आधार छै ते अधेय ने आधार ना किण ही प्रकारे करी अभेदोपचार थकी संघ ने तीर्थ कह्यं तेहने करिवा नूं शील ते माटे तीर्थंकर कहिये।

इहां मुख्य अर्थ प्रवचन ने तीर्थ कह्यु ते प्रवचन रूप तीर्थ बहुल पणे संघ ने विषे रह्यं छे तिण सूं संघ ने तीर्थ कह्यु ते प्रवचन रूपी तीर्थ थी संघ जुदो नथी ते माटे।

॥ सोरठा ॥

तीर्थ प्रवचन सार रे, तत् करण शील तीर्थङ्करा।
नमोत्थूणं में धार रे, राय प्रश्रेणी वृत्ति मे ॥१४॥

॥ अत्र टीका ॥

तीर्य्ते संसार समुद्रोऽनेनेति तीर्थं प्रवचनं तत् करण शीलास्तीर्थं कराः तेभ्यः ॥ इति ॥

॥ श्लोक ॥

तीर्थ शास्त्रा १ ध्वर २ चेलो ३ पायो ४ पाध्याय ५ मंत्रिषु ६ अवता ऋषि ७ जुष्टांभः ८ स्त्री रजः ९ सु च वि श्रुतं ।

॥ इति विश्वे थांतत वर्गे ॥

॥ सोरठा ॥

तीर्थ शास्त्र इम लेख रे. कह्यो मेंदनी कोष में ।
दश नामा में देख रे. प्रथम नाम ए परवरो ॥१०॥

॥ श्लोक ॥

तीर्थे शास्त्रा १ ध्वर २ चेलो ३ पाय ४ नारीरजः ५ सु च । अवता ऋषि ६ जुष्टांबु ७ पात्रो ८ पाध्याये ९ मंत्रिषु १० ।

॥ इति मेदनी थांतत वर्गे ॥

॥ सोरठा ॥

गुणतीसमं उत्तराध्ययन रे, बोल गुनीसम वृत्ति में ।
तीर्थ शब्दे वयण रे. गणधर वा प्रवचन श्रुतः ॥११॥
भगवई वृत्ति मझार रे. तित्थ गराणं नो अर्थ ।
तीर्थ प्रवचन सार रे, इमहिज समवायङ्ग वृत्ती ॥१२॥

सिद्धः इहां पिण परम गुरू ते तीर्थंकर तेहना वचन-ते आगम तेहने तीर्थ कह्यो, ते आगम आधार विना न हुवै तें आधार माटे संघ ने तथा प्रथम गणधर ने तीर्थ कह्यो ।

॥ सोरठा ॥

आवश्यक निर्युक्ति रे, तास अर्थं में भाव थी ।
तीर्थं प्रवचन उक्त रे, समर्थ क्रोधादि जीपवा ॥१८॥

॥ अत्र टीका ॥

इह भाव तीर्थं क्रोधादि निग्रहं समर्थ प्रवचनं मेव गृहते ।

॥ एहनुं अर्थ ॥

इहाँ भाव तीर्थ क्रोधादि निग्रह समथ प्रवचन सूत्र हीज ग्रहण करिये, इहाँ पिण प्रवचन सूत्र ने तीर्थ कह्यो ।

॥ सोरठा ॥

सूत्रादिक बहु ठाम रे, तीर्थं सूत्र भणी कह्युं ।
ते तीर्थं प्रवचन ताम रे, रहिस्ये इक्कीस सहस्र वर्षं ॥१९॥
प्रवचन तीर्थं सोय रे. सघ आधारे हुवै सदा ।
क्रियादिक वेलां जोय रे, द्रव्य लिङ्गी आधार हुवै ॥२०॥
जद को प्रश्न करन्त रे, मुनिना गुण विन ओहनुं ।
आश्रयं सूत्र किम हुन्त रे, तसु उत्तर चित सांभलो ॥२१॥
व्यवहार उद्देश व्यवहार रे, बहु श्रुत बहु आगम भण्युं ।
द्रव्य लिङ्गी जे धार रे, मुनि प्रायश्चित ले तिण कने ।२२।

॥एहनुं अर्थ वार्तिका करीइं कहे छे ॥

तीरीये संसार समुद्र इणे करी इति तीर्थ प्रवचन सूत्र ते सूत्र तीर्थं करिवा ना शील थकी तीर्थंकर कहिये, इहाँ राय प्रशेणी नी वृत्ति में प्रवचन ते आगम ने तीर्थ कह्युं ते आगम रूपी तीर्थ ना कर्त्ता तीर्थंकर छे ने माटे तीत्थयरे नो अर्थ तीर्थं कर कियो ।

॥ सोरठा ॥

पन्नवणा वृत्ति मझार रे, पनर भेद सें तित्थ सिद्धा ।
प्रथम पदे अवधार रे, दाख्यो छे ते सांभलो ॥१५॥
सत्य प्ररूपक सोय रे, परम गुरू छे तेहना ।
वचन विमल अवलोय रे, तीर्थं कहिये तेहने ॥१६॥
ते निराधार नहिं होय रे, तसु आधारज संघ प्रति ।
तीर्थं कहिये जोय रे, वा धुर गणधर तिहां कह्युं ॥१७॥

॥ अत्र टीका ॥

तीर्थं ते संसार सागरो अनेनेति तीर्थं यथा अवस्थित सकल जीवा-जीवादि पदार्थ परूपकं परमगुरू प्रणीत वचनं तच्च निराधार न भवति इति तदा धारं संघः प्रथम गणधरो वा तस्मिन् उत्पन्नाये सिद्धाहस्ते तीर्थ सिद्धा ।

॥ एहनुं अर्थ वार्तिका करीइं कहे छे ॥

तिरीये संसार सागर इणे करी इति तीर्थ यथावस्थित सकल जीव अजीवादिक पदार्थ ना प्ररूपक परम गुरू ना कह्या वचन तेहने तीर्थ कहिये अने ते परम गुरू ना वचन रूप तीर्थ ते आधार विना न हुवे इम ते संघ ने आधार छे ते भणी संघ ने तीर्थ कहीजे, अथवा प्रथम गणधर ने तीर्थ कहिये ते संघरूप तीर्थ ने विषे ऊपना जे सिद्ध थया ते तीर्थ

संघ आधारे जेह रे, सूत्र रूप जे तीर्थ ते।
निरन्तर नहीं दीसेह रे, वर्ष सहस्र इकवीस लग ॥२०॥

कदही संघ आधार रे, कदही ग्रन्थ आधार हुवै।
सूत्र तीर्थ सुखकार रे, वर्ष इकवीस हजार लग ॥२१॥
कोई कहै चिहुं विध सङ्घ रे, तेह भणी तीर्थ कह्युं।
तसु आधार सु चङ्ग रे, प्रवच तीर्थ ते भणी ॥२२॥

पिण प्रवचन सु प्रशंस रे, द्रव्य लिङ्गी आधार तसु।
तीर्थ तणोज अंश रे, किम कहिये ? उत्तर तसू ॥२३॥
पण्डित मर्ण विख्यात रे, शत दूजे उद्देश धुर।
पाउवगमन सुजात रे, भत्त पच्चखाण ज दूसरो ॥२४॥

मुख वचने करि न्हाल रे, मरण पण्डित बे आखिया।
मुनि अणशण विन काल रे; करै तिको पण्डित मृत्यु २५
बाल मर्ण फुन बार रे, मुख्य बचन करि ने कह्या।
बार मरण विन धार रे, असंयती नो बाल मृत्यु ॥२६॥

पूरण तापश ताहि रे, वलि जमाली तामली।
बार मरण में नाहिं रे, पिण बाल मरण ते जाणवो ।२७।
मुख्य बचन करि बार रे, बाल मरण आख्या प्रभू।
तिम तीर्थ संघ च्यार रे, मुख्य बचन करि जाणवा ।२८।

पण्डित मरण पिण दोय रे, मुख बचने करिने कह्या।
तिम चिहुं तीर्थ जोय रे, मुख्य बचन करि जाणवा ।२९।

इहां द्रव्य लिङ्गी आधार रे, सूत्रागम श्री जिन कह्या ।
तसु श्रद्धा आचार रे, विरुद्ध हुवे ते तो जुदो ॥२३॥

॥ वार्त्तिका ॥

ववहार उद्देशे पहले कह्यो साधू ना रूप सहित भेषधारी बहु श्रुत बहु आगम नूं जाण ते कनै साधू आलोवणा करै एहवुं कह्युं ए भेषधारी ने आधार बहु श्रुत बहु आगम कह्यो छै ते माटै-तेहनुं केवलुं जेवलुं शास्त्र ना अर्थ नूं-शुद्ध जाण पणो ते श्रुत आगम रूप तीर्थनूं अंश संभवै ते माटै किण हिक काले चतुर्विध संघ न हुवै तो लिङ्गधारी ने आधारे प्रवचन रूप तीर्थ नो अंश हुवै एहवुं संभाविये छै ।

॥ सोरठा ॥

वलि ववहार कथित्त रे, बहु श्रुत आगम भण्युं ।
श्रावक पश्चात्कृत्य रे, मुनि आलोवै तिण कनै ॥२४॥
इहां ग्रहस्थ आधार रे, बहु श्रुत आगम जिन कह्यो ।
तसु सावद्य व्यापार रे, ए तो एह थी छै जुदो ॥२५॥
अर्थ रूप अवलोय रे, जाण पणूं छै जेह नूं ।
ते निर्वद्य छै सोय रे, सूत्र तीर्थ छै जे भणी ॥२६॥
मिथ्या दृष्टि देख रे, दिशि जाण दश पूर्व धर ।
उत्कृष्टो सम्पेख रे, नन्दी मांहि निहालज्यो ॥२७॥
मिथ्याती आधार रे, इहां प्रभू पूर्व आखिया ।
श्रद्धा तास असार रे, ते तो धुर आस्रव अछै ॥२८॥
इम द्विज मन्त्र आधार रे, किण वेल्यां मुनि नहिं थया ।
द्रव्य लिंग्याधार रे, सूत्र रूप तीर्थ हुई ॥२९॥

ते माटे अवधार रे, तीर्थ प्रवचन सूत छे।
केइहिं संघ आधारे रे, द्रव्य लिङ्गी आधार कहि ॥४२॥

॥ दोहा ॥

सूत्र भगवती नी पंवर, सम कृत जोड विषेह।
वलि कर्म्म तीर्थ न्याय कह्यु, ते इहां ग्रहण करेह ॥४३॥

॥ इति इकीस हजार वर्ष तीर्थ रहसी ते अधिकार ॥

॥ अथ चौदमूं आगमा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

पञ्च अने चालीस में, जे चिहुं शरण विचार१।
नाम भक्त परिज्ञार२ वलि, फुन पईन्नो सन्थार३ ॥ १ ॥
जीत कल्प४ पिंड नियुक्ति५, पच्चखाण कल्प अवलोय।
ए खट नी नन्दी विषे, साख नहीं छे कोय ॥ २ ॥
महा निशीथ विषे कह्यु, द्वितीय अध्ययन मझार।
कुं लिखत दोष देवो नहीं, तसु कारण अवधार ॥ ३ ॥
एहिज महा निशीथ मे, किहां एक अर्द्ध शीलोग।
किहां श्लोक किहां अक्षर नौ, पंक्ति ओली प्रयोग ॥ ४ ॥
किहां एक पानो अर्द्ध ही, किहां पत्र बे तीन।
गल्यो ग्रन्थ इम आदि बहु, इह विध कह्यु सुचीन ॥ ५ ॥
वलि कह्यु तृतीय अध्ययन में, ए पुस्तक रे मांहि।
चट्टो ढूंक पाना थकी, बीजो पानो ताहि ॥ ६ ॥

॥ एहिज अर्थ वार्तिका करीइं कहै छै ॥

जिम भगवती शतक दूसरे उद्देशै पहलै मुख्य वचने करी वाल मरण बारा प्रकार नो कह्यो अने असंयती अविरती वारा प्रकार विना चालतो ही मर जाय ते पिण वाल मरण हिज छै, तथा तामली जमाली प्रमुख नो बाल मरण हीज छै पिण ते बारा में नथी कह्यो ते माटै ये वार प्रकार बाल मरण मुख्य वचने करी जाणवो, या वलि पण्डित मरण वे प्रकार कह्या एक तो पादोपगमन दूजो भत्तपच्चखाण ए पिण मुख वचने करी कह्या, जे साधू संथारा विना आराधक पद पायो तेह पिण पण्डित मरण हिज छै जिम श्रावानुभूति तथा सु नक्षत्र मुनि नो संथारो चाल्यो नथी ते भणी भत्त प्रत्याख्यान पादोपगमन तो नथी पिण पण्डित मरण हिज छै अने पादोपगमन भत्त पच्चखाण ए वे भेदे पण्डित मरण कह्या ते मुख्य वचने करी जाणवा, तथा अराधना ज्ञान दर्शन चारित्र ए तीन प्रकार नी भगवती शतक आठमें उद्देशै दशमे कही ते पिण मुख्य वचने करी जाणवी, अने वलि तिणहिज उद्देशै श्रुत ते समकित रहित अने शील क्रिया सहित ने देश आराधक कह्यो तिहाँ वृत्तीकार कह्यो ए बाल तपस्वी थोडो अंश मुक्ति मार्ग नो आराधै एहवो अर्थ कियो छै जिम ज्ञान रहित शील सहित बाल तपस्वी मोक्ष मार्ग नो अंश आराधै ते देश आराधक छै पिण तीन आराधना में नथी तिम द्रव्य लिङ्गी ने आधार प्रवचन सूत्र ते तीर्थ नो अंश संभवै पिण ते च्यार तीर्थ मे नथी।

॥ सोरठा ॥

वर्ष इक्कीस हजार रे, तीर्थ रहिस्यै न्याय तसु।
एम संभवे सार रे, पुन बहु श्रुत कहै तेह सत्य ॥४०॥
वर्ष इकवीस हजार रे, तीर्थ रहिस्यै इम कह्यो।
पिण चिहुं तीर्थ सार रे, रहिस्यै इम आख्यो नथी।४१।

हरिभद्र सूरे करी, दशवैकालिक वृत्ति।
भाष्य अने वलि चूर्णि पिण, पूर्वाचार्य कृत्त ॥१७॥
तिम ए षट नी नवि करी, पूर्वाचार्ये जोय।
तिण सूं तिणे न मानिया, एहवूं दीसे सोय ॥१८॥
शेष रह्या बत्तीस जे, मानवा योग आरोग्य।
एह थी मिलता अन्य पिण, छे मुझ मानण योग्य ॥१९॥

॥ इति आगमा अधिकार ॥

॥ अथ पनरम मुख वस्त्रिका अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

इन्द्रभूति ने आखियो, मृगा राणी ताहि।
मुंहपोत्तिया हूं करी, मुख बांधो मुनिराय ॥ १ ॥
ते मुख कहिये केहने, उत्तर तसु अवलोय।
नाक तणो ए नाम मुख, न्याय विचारी जोय ॥ २ ॥
दुर्गन्ध आवै नाक नै, ते माटै सुविचार।
नाक बांधवा नो कह्यो, राणी मृगा जिंवार ॥ ३ ॥
ज्ञाता अध्ययन आठमैं, दुर्गन्ध व्याप्यां ताहि।
षट राजा मुख ढांकिया, ते दुर्गन्ध नाके आय ॥ ४ ॥
ज्ञाता नवम अध्ययन में, दुर्गन्ध व्याप्यां न्हाल।
मुख ढांकवा आख्या तिहां, जिन ऋषि ने जिन पाल ॥५॥

ते माटे ए सूत्र ना, आलावा न पामेह ।
तिहां भणणहार सूत्रां तणा, त्यां अशुद्ध लिख्युं हुवे जेह ॥
दोष न देवो तेहनो, खंड खंड थई एह ।
पत्र सड्या खाधा वलि, जीव उद्देहि जेह ॥ ८ ॥
हरिभद्र निज मति करी, सांधी लिख्यूं ज ताम ।
इम कह्युं महा निशीथ में, वलि अन्य आचार्य्य नाम ।९।
तिण सूं महा निशीथ पिण, ड़ोहलाणो छै एह ।
सर्व सूत्रगो नहि रह्यो, निपुण बिचारी लेह ॥१०॥
शेष रह्या षट तेह में, काइक काइक वाय ।
अङ्ग सूं न मिलै तेह वच, किम मानीजे ताहि ॥११॥
टीका चूरणि दीपिका, भाष्य निर्युक्ति जाण ।
किणही करी दोसै नथी, तिण सूं एह अप्रमाण ॥१२॥
एकादश जे अङ्ग थी, मिलता वचन सुजाण ।
सर्व मानवा योग्य सुभ, पइन्ना प्रमुख पिछाण ॥१३॥
धुर बे अङ्ग नी वृत्ति जे, शीलाचार्यें किद्ध ।
अभय देव सूरे करी, नव अङ्ग वृत्ति प्रसिद्ध ॥१४॥
फुन अभय देव सूरे रची, प्रथम उपांग प्रबन्ध ।
चन्द्र सूरि विरचित वृत्ति, निरावलिया श्रुतस्कन्ध ॥१५॥
शेष उपांग अरु छेदनी, मलयागिरि कृत जोय ।
हेमाचार्य्य वृत्ति करी, अनुयोग द्वार नी जोय ॥१६॥

तथा तपस्वी प्रमुख जे, डोरी बांधै तास।
ते किण सूत्रे भाखियो ? जोवो हिये विमास ॥३६॥
कम्बर बिछावण नी करै, तसु डोरी बांधेय।
ते पिण किण सूत्रं कह्यु ? न्याय विचारी लेह ॥३७॥
वलि सीरावण बांधता, डोरी थकीज जोय।
ते पिण किण सूत्रे कह्यु, उत्तर आपो मोय ॥३८॥
वलि चिरमली सूत्र में, भाख्यो श्री भगवान।
तसु डोरी बांधे तिका, किसा सूत्र में जान ? ॥३९॥
पुस्तक ने पूठा तणे, पडवा रै पहिछाण।
डोरी बांधे छै तिका, किसा सूत्र में वाण ? ॥४०॥
वलि लिखणा राखवा, कलमदान कहिवाय।
डोरी बांधे तेह ने, किसा सूत्र रे म्हांय ? ॥४१॥
लिखवारी पाटी तणे, डोरी प्रति बांधेह।
किसा सूत्र मे ते कह्यु, देखो तसु लेखेह ॥४२॥
तथा लोक पाना तणे, डोरी श्री मांडेह।
फांच्या नी पाटी करै, किसा सूत्र में तेह ? ॥४३॥
कारण में पग प्रमुख रै, पाटो बांधे देख।
डोरी बांधे तेह ने, किसा सूत्र में लेख ? ॥४४॥
गोछारे डोरा थकी, पात्रा बांधे तेह।
किसा सूत्र मांही कह्यो ? उत्तर आपो एह ॥४५॥

ज्ञाता अध्ययन बारमें, जे जितशत्रू राय।
मुख ढांके इम आखिया, दुर्गन्ध आये ताय ॥ ६ ॥
मुखनो अवयव नाक छे, ते नाक भणी मुख ख्यात।
वारू न्याय विचार ने, समझो सुगुण सुजात ॥ ७ ॥
होट हडवटी नाक फुन, चक्षु गाल्ल निलार।
मुखना अवयव ते भणी, मुख कहिये सु विचार ॥ ८ ॥
धुर अङ्ग प्रथम अध्ययन में, द्वितीय उद्देश उदंत।
पृथिवी वेदन ऊपरे, अन्ध पुरुष दृष्टन्त ॥ ९ ॥
पग सूं लेई शिर लगे, तनु द्वात्रिंशत् स्थान।
भाला सूँ भेदे वलि, खडगे छेदे जान ॥१०॥
तिहां होट हडवटी नाक फुन, आंख जीभ ने दन्त।
गाल निलार अरु कर्ण फुन, जू जूआ नाम कथन्त ॥११॥
ए मुखना अवयव कह्या, पिण मुख नो न कह्यो नाम।
ते माटे ए सहु भणी, मुख कहिये के नाम ॥१२॥
द्वादश आंगुल मुख कह्यो, नव मुख नो सहु देह।
अनुयोग द्वारे आखियो, देखो पाठ विषेह ॥१३॥
ललाट थी लेई करी, द्वादश आंगुल जाण।
नाक होट ने हडवटी, ए मुख तणुं प्रमाण ॥१४॥
गर्गाचार्य ना कुशिष्य, मुख ने विषे विकार।
भ्रकुटी करे कह्या प्रभू, उत्तराध्ययन मझार ॥१५॥

कहिये किणी प्रकार करि, ते स्याद्वाद कहिवाय ।
न्याय कहुं छूं तेहनो, सांभलजो चितल्याय ॥ ३ ॥
सूत्र भगवती ने विषै, शतक सातमें सोय ।
द्वितीय उद्देशे भाखियो, जीव प्रश्न अवलोय ॥ ४ ॥
किणी प्रकार करि प्रभू, जीव साश्वता ख्यात ।
किणं ही प्रकार असाश्वता, आख्या श्री जगनाथ ॥ ५ ॥
द्रव्य थकी तो साश्वता, भाव थकी सु विचार ।
असाश्वता प्रभूजी कह्या, ए स्याद्वाद मत सार ॥ ६ ॥
सूत्र भगवती ने विषे, शतक चौदमें सार ।
तूर्य उद्देशे भाखियो, परमाणू अधिकार ॥ ७ ॥
कह्यो परमाणू साश्वतो, किणी प्रकार करेह ।
किणी प्रकार असाश्वतो, हिव तसु न्याय कहेह ॥ ८ ॥
द्रव्य थकी तो साश्वतो, परिमाणू प्रति ख्यात ।
न मिटै परम अणू पणो, किण ही काल विख्यात ॥९॥
वर्णादिक ने पज्जव करि, असाश्वतो अवलोय ।
स्याद्वाद वच एह छै, न्याय दृष्टि करि जोय ॥१०॥
बृहत्कल्प मांहि कह्यु, पञ्चमुद्देश मझार ।
प्रथम पोहर अशणादि प्रति, वहिरी ने अणगार ॥११॥
तूर्य पहिर राखी करी, ते अशणादि प्रतेह ।
भोगवणो कल्पै नहीं, सुखे समाधे एह ॥१२॥

श्रमणादिक प्रति बहिरतां, पांतौ करतां सोय।
अन्य साधु प्रति धामतां, चरचा करतां जोय ॥२६॥
मुनि ने कार्य्य भलावतां, इत्यादिक सु प्रयोग।
मुख बांध्यां विन किम रहै, अति तीखो उपयोग ॥२७॥
तिण सूं यतना कारणे, डोरो घाली सोय।
मुख बांधे मुख वस्त्रिका, और कारण नहिं कोय ॥२८॥
जदि कहै डोरो किहां कह्यो? तसु कहिये इम वाय।
कान विषे घालै तिका, किसा सूत्र रै मांहि? ॥२९॥
मुख बांधे डोरे करी, तसु करे निन्दा तात।
कान वधावे प्रगट ए, आ किसा सूत्र नो वात ॥३०॥
तर्क करे डोरां तणी, कहै किण सूत्रे ख्यात।
कान वधावे तेहनो, क्यूं नहिं पूछे वात ॥३१॥
मोर पृच्छना देश प्रति, घाली कर्ण मझार।
उदक थकी छांटा थकां, फूले तेह तिंवार ॥३२॥
इम नित प्रति बहु खप करी, कर्ण वधाय विशेष।
इम घाले मुख वस्त्रिका, किसा सूत्र में लेख? ॥३३॥
कहै वचन शुद्ध यतना अर्थ, घालां कर्ण मझार।
तो डोरो पिण यतना अर्थ, न्याय सरिखो धार ॥३४॥
उदक तणा घट ने विषे, डोरी बांधे तेह।
किसा सूत्र में ते कह्युं, देखोजी चित देह ॥३५॥

दशवैकालिक देखल्यो, तूर्य अध्ययन मझार ।
सचित उदक नहिं सङ्घटै, ए जिन आज्ञा सार ॥२३॥
वृहत्कल्प तीजै कह्यु, विहार कारण थी जोय ।
नदी उतरणी प्रभू कही, ए स्याद्वाद वच होय ॥२४॥
मरणान्त कष्टे मुनि भणी, सचितोदक अवलोय ।
भोगवणूं प्रभू एहवूं, स्याद्वाद नहिं होय ॥२५॥
उत्तराध्ययन कथा विषै, परीषह द्वितीय प्रसिद्ध ।
मर्णान्त कष्टे क्षुल्लक शिष्य, सचितोदक नहिं पिद्ध ॥२६॥
शत अष्टादश भगवती, दशम उदेशै देख ।
पूछ्यो सोमिल प्रभू प्रति, जे स्युं छो तुम्ह एक ॥२७॥
तथा तुम्हे स्यूं दोय छो, वा अक्षय तुम्ह होय ।
फुन स्यू अव्यय छो तुम्हे, अवस्थित तुम्ह जोय ॥२८॥
के तुम्ह अनेक भूत फुन, भाव भविक अवधार ।
वीर भणी अट प्रश्न ए, सोमल पूछ्या सार ॥२९॥
इतिकार कह्यो तब, प्रभू, स्याद्वाद प्रति ताय ।
सर्व दोष गोचर रहित, अविभक्ती कहिवाय ॥३०॥
द्रव्य पिण हूं छूं सोमिला, यावत वलि अनेक ।
भूत भाव भावी अपि, हूं छूं इम कह्यु पेख ॥३१॥
किण अर्थे प्रभु इम कह्यु, जाव भविक हूं सोय ।
प्रभु कहै द्रव्यार्थ करी, द्रव्य पिण छूं अवलोय ॥३२॥

डोरा सूँ मुंह पोतिया, बांधे जयणा काज।
तर्क करै तसु पूछिये, इतला बोल समाज ॥४६॥
कहे अष्ट पहिर बांध्यां रहे, ते किण सूत्रे ख्यात ?
तो एक पहिर बांधे तिका, किण सूत्रे अवदात ॥४७॥
वखाण में इक पहिर लग, कर्ण घाल बाधन्त।
ते पिण किणी सिद्धान्त में, भाख्यो नहिं भगवन्त ॥४८॥
अष्ट पहोर बांध्यां थकां, दोष घणो जो होय।
तो एक पहोर बांध्यां थकां, दूषण थोड़ो जोय ॥४९॥
जो एक पहोर बांध्यां थकां, दोष नहिं छै कोय।
तो आठ पहर बांधे तसु, दोषण किण विध होय ॥५०॥
डोरो घाले कर्ण में, तेहनो दोषण होय।
तो कर्ण विषे मुखवस्त्रिका, घाल्यां दोषण जोय ॥५१॥
जो कर्ण विषे मुखवस्त्रिका, घाल्यां दोष न कोय।
तो डोरो घाले कर्ण में, तो पिण दोष न होय ॥५२॥
कोई कहे मुखवस्त्रिका, अष्ट पहिर लग एह।
बांध्यां कफ में ऊपजे, जीव असङ्ख्ति जेह ॥५३॥
तो मुनि अक्षा तनु विषे, थयो गुम्बडो कोय।
राधि रुधिर रै ऊपरै, पाटो बांधे सोय ॥५४॥
जीव समुर्च्छिम ते विषे, उपजे तिण रै लेख।
पाटा रै लागा रहै, रुधिर राधि सम्पेख ॥५५॥

॥ अथ १७ मूं विषंवाद् अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहे विषंवाद मत, प्रभू नो समय विषेह ।
किण सूत्रे वच जे कह्युं, किहां अन्यथा तेह ॥ १ ॥
किण सूत्रे वच जो कह्युं, ते वच अन्य सूत्रेह ।
विकटे ते विषंवाद कहे, उत्तर तास सुणेह ॥ २ ॥
सखर सप्त भङ्गी कही, जिन वाणी सुखदाय ।
सप्त नये करि सत्य वच, तसु विषवाद न कहाय ॥ ३ ॥
किण ही सूत्र विषे प्रभू, आख्या वयण विख्यात ।
विगटे जे अन्य सूत्र थी, ते विषंवाद वच थात ॥ ४ ॥
विषंवाद वच एह तो, प्रभू नो नहिं छै कोय ।
वच केवल ज्ञानी तणो, व्यभचारिक नहिं होय ॥ ५ ॥
विषंवाद जोगे करी, अशुभ नाम कर्म बंध ।
अष्टम शतकी भगवती, नवमे उद्देशे सम्ब ॥ ६ ॥
विषंवाद ए अशुभ छै, तिण थी अशुभज बंध ।
तो किम हुवे प्रभूजी तणो, विषंवाद वच मंद ॥ ७ ॥
अ विषंवाद योगे करी, नाम कर्म शुभ बंध ।
अष्टम शतकी भगवती, नवम उद्देशे संध ॥ ८ ॥
दशमा अङ्ग में देखलो, सप्तमध्ययने मांहि ।
सत्यवादी छै तेह तुं, विषंवाद वच नांहि ॥ ९ ॥

सूत्र भगवती ने विषे, सोलम शतक मंझार।
द्वितीय उद्देशे भांखियो, कहिये ते अधिकार ॥६६॥
शक्र उघाड़े मुख लवै, भाषा सावद्य सोय।
हस्त वस्त्र मुख दे वदै, निरवद्य भाषा होय ॥६७॥
वृत्तिकार इम आखियो, जीव सरक्षण सोय।
निरवद्य भाषा जाणवी, अन्या सावद्य होय ॥६८॥
विकलेन्द्री ना पज्झत्तगा, तेहना स्थानक जेह।
ते सुरलोक विषै नथी, पन्नवणा द्वितीय पदेह ॥६९॥
धर्म सम्बन्धी वार्त्ता, करै शक्र जेहवार।
बोलै मुख ढांकी तदा, ते निरवद्य वच सार ॥७०॥
संसारिक जे वार्त्ता, करै शक्र जेहवार।
वदै उघाड़ें मुख तदा, ते सावद्य वच धार ॥७१॥
तिण कारण वायु तणी, दयां अर्थ मुनिराज।
मुख बांधे मुंह पोत्तिया, पिण अवर नहिं छै काज ॥७२॥

॥ अथ सोलहमूं स्याद्वाद अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै भगवन्त नों, स्याद्वाद मत जोय।
एकान्तिक कहिवूं नहीं, तसु उत्तर अवलोय ॥ १ ॥
स्यात् कथंचित जाणवूं, किण ही प्रकार कहेह।
वदवूं कहिवूं वादते, स्याद्वाद छै एह ॥ २ ॥

कल्प कहै छुर कड्ड से, चवन काल तिहुं वार ।
एक छटीमा भाखिया, जिन साहरण विचार ॥८०॥
गर्भ साहरण किदो तिहां, कल्प सूत्र में ख्यात ।
संहरियां पहिलां पछै, जाणुं कौ उपजाय ॥८१॥
संहरतां वेलां प्रभू, वर्त्तमान जाणेह ।
जाणुं नांहि एहवुं कह्युं, कल्प सूत्र वचं एह ॥८२॥
आचारांग पन्नरमें कह्यो, साहरण प्रवन प्रख्यात ।
वलि साहरतां वार जिण, जाणुं श्री जगनाथ ॥८३॥
चवन काल तो समय इक, छद्मस्थ नो उपयोग ।
असंख्य समय नुं तें भणो, चवन न जाणुं जोग ॥८४॥
सुर कार्य साहरण वे, समय असंख्य हुवाय ।
तिण सुं साहरतां प्रभू, जाणुं अवधि प्रभाय ॥८५॥
साहरतां जाणुं नहीं, कल्प सूत्र में ख्यात ।
साहरतां जाणुं कह्युं, सुर वडे उपजाय ॥८६॥
कल्प सूत्र सुर कई है, ए तिहुं वच भाख्यात ।
कव सांचो झूठो किसो, देखो तव पखपात ॥८७॥
वीर प्रभू तो एक है, जाणुं सुर कई ख्यात ।
नवि जाणुं कल्पे कह्युं, तिहुं साचा किम थात ॥८८॥
उभय सांहिलो एक तो, मिथ्या वचन विशेष ।
द्वेषीजी देखो तुम्हें, देखो तव मत टेक ॥८९॥

गाढा गाढ आतङ्क- करि. तूर्यं पहिर में तेह ।
भोगवणो कल्पे तसु, स्याद्वाद वच एह ॥१३॥
प्रथम पहिर बहिरी करी, कारण पडियां ताहि ।
रात्रि विषे जो भोगवै, ए स्याद्वाद वच नांहि ॥१४॥
तूर्य पहिर आज्ञा कही, निश नो आज्ञा नांहि ।
तिण सुं निश नहिं भोगवै, कारण पडियां ताहि ॥१५॥
द्वितीय उद्दे शे ने विषे, वृहत्कल्प रै मांहि ।
जल वा मद ना घट तिहां, रहिवुं कल्पे नांहि ॥१६॥
अन्य स्थान न मिलै कदा, तो इक वे निशि जाण ।
रहिवूँ कल्पै प्रभू कह्यो, ए स्याद्वाद पहिछाण ॥१७॥
तिणहिज उद्देशे आखियो, जे आखी निशि मांहि ।
दीपक वा अग्नि वलै, तिहां नहि रहिवू ताहि ॥१८॥
जो अन्य जागां नहिं मिलै, तो इक वे निशि तिण स्थान
रहिवूँ कल्पै प्रभू कह्यो, ए स्याद्वाद वच जान ॥१९॥
मुनि नै सङ्घट्टो स्त्री तणो, करिवो बरज्यु स्वाम ।
सोलमां उत्तराध्ययन में, वलि बहु सूत्र ताम ॥२०॥
वृहत्कल्प छटे कह्यु, नदी प्रमुख थी वार ।
अज्जा प्रति काढे मुनी, ए स्याद्वाद मत सार ॥२१॥
ग्रहस्थ पुरुष वा स्त्री भणी, नदी प्रमुख थी जोय ।
काढे मुनि वच एहवूं, स्याद्वाद नहिं कोय ॥२२॥

भाख्यो चूर्णि में तिहां, शिष्य अपरिखित सोय।
रोग मिटावा निमित्त, वैद्य. कथन थी जोय ॥४०॥
अथवा मारग चालतां, उणोदरी छै तेह।
अणसरतै जे. भोगवै, विरुद्ध कहिजे जेह ॥४१॥
सूत्रे वरज्यो सचित अम्ब, चूर्णिकार फुन तेह।
कारण पडियां चूंसवूं, कह्युं विरुद्ध वच एह ॥४२॥
सचित रूंख मुनि जो चढे, तो चौमासिक दण्ड।
निशीथ उद्देशे बारमें, श्री जिन वयण सुमण्ड ॥४३॥
सूत्र निशीथ तणी जिका, चूर्णि विषै इम वाय।
स्वान प्रमुख ना भय हरण, दण्ड ग्रहे मुनिराय ॥४४॥
प्रथम अचित दांडो ग्रहे, पछे मिश्र. परितेण।
प्रथम परित्त थावर पछे, अनन्त काय नुं जेण ॥४५॥
रूंख ऊपर मुनि नवि चढे, ए जिन आज्ञा शुद्ध।
चूर्णिकार कह्युं सचित दण्ड, ग्रहे ते वयण विरुद्ध ।४६।
ऋषभ भरत फुन बाहुबलि, ब्राह्मी सुन्दरी बेह।
लक्ष चौरासी पूर्व नूं, आयु तूर्य अछेह ॥४७॥
ऋष मण्डल मांहि कह्युं, ऋषभ देव भगवान।
भरत विना बलि ऋषभ ना, पूत्र निर्वाणु जान ॥४८॥
भरत तणा बलि अष्ट सुत, अष्टोतर सौ एह।
एक समय सीझ्या तिणी, विरुद्ध वचन छै जेह ॥४९॥

ज्ञान दर्शन करि द्रोय छ्रं, प्रदेशार्थ करि साय ।
अक्षय छं अव्यय अपि, अवस्थित पिण थाय ॥३३॥
अनेक भूत भावी अपि, छं उपयोग करेह ।
न्याय सहित उत्तर कव्रं, स्याद्वाद वच एह ॥३४॥
द्रुमज थावरचा सुक प्रते, ज्ञाता पञ्चम् लेह ।
द्रुमज पार्श्व सोमिल प्रते, पुप्फिया विषे कहेह ॥३५॥
सहु दोषण करि रहित छै, स्याद्वाद वच एह ।
पिण दोषण कर सहित वच, स्याद्वाद न कहेह ॥३६॥
पूर्वापर अविरुद्ध वच, स्याद्वाद मति मांहि ।
पिण पूर्वापर विरुद्ध वच, स्याद्वाद वच नाहिं ॥३७॥
इत्यादिक प्रभू आखिया, किण ही प्रकार करेह ।
नित्य अनित्यादिक जिके, स्याद्वाद वच तेह ॥३८॥
पिण ज्यों किण ही प्रकार करि, कुशील में नहि धर्म्म ।
वलि नहिं किण ही प्रकार करि, शील विषे अघ कर्म्म ३९
अज हिन्सादिक में नहीं, किण ही प्रकारे धर्म ।
किण ही प्रकार बंधे नहीं, सम्बर थी अघ कर्म ॥४०॥
किण ही प्रकार हुवै नहीं, सावद्य मांहीं धर्म ।
किण हीं प्रकार बंधे नहीं, निरवद्य थी अघ कर्म ॥४१॥
किण हीं प्रकार हुवै नहीं, जिन आज्ञा विन धर्म ।
किण ही प्रकार नहीं बंधै, आज्ञा थी अघ कर्म ॥४२॥

॥ इति स्याद्वाद अधिकार ॥

गुरु वन्दै शिष्य केवली, सूत्र विषै इम ख्यात।
तो प्रभू वन्दो इम कह्यां, आशातन किम थात ॥६०॥
सचित आहार मुनि ने अभक्ष, पञ्चम अङ्ग प्रबन्ध।
ज्ञाता अध्ययने मञ्च में, निरावलिया सुत स्कन्ध ॥६१॥
द्वितीय आचारङ्ग लागतां, आधा कर्मी आहार।
अप्रासुक पिण वृत्ति में, भोगवणुं कह्यु धार ॥६२॥
कह्यो अफासु अभक्ष जिन, वृत्ति विषै पुन तेह।
कह्यु भोगवणो कारणै, विरुद्ध वचन छै एह ॥६३॥
शत पणवीसमें भगवती, छट्ठा उद्देशा मांहि।
बकुश उत्तर गुण तणो, पडि सेवी कह्यु ताहि ॥६४॥
तिणज उद्देशे वृत्ति में, बकुश प्रति इम ख्यात।
मूल उत्तर पडि सेविये, तेह विरुद्ध सञ्जात ॥६५॥
ठाणा अङ्ग ठाणे चतुर्थ, प्रथम उद्देशे पेख।
सनत कुमार तणी कही, अन्त क्रिया सुविशेष ॥६६॥
आवश्यक निर्युक्ति में, उत्तराध्ययन वृत्ति मांहि।
तीजे स्वर्ग गयुं कह्यो, मिलै नहि ए वाय ॥६७॥
अष्टम शतकी भगवती, द्वितीय उद्देशा मांहि।
एकेन्द्री निश्चय करी, कह्या अज्ञानी ताहि ॥६८॥
कर्म ग्रन्थ मे देखज्यो, एकेन्द्री रै मांहि।
दे गुणठाणा आखिया, तेह विरुद्ध कहाहि ॥६९॥

सत्यवादी संसार का, तसु विषवाद वच नांहि ।
तो प्रभूजी ना वयण ते, विषंवाद किम थाय ॥१०॥
पूर्वापर अविरुद्ध वच, प्रभू ना समवायङ्ग ।
वच अतिशय पैंतीस में, अतिशय नवम सुचङ्ग ॥११॥
उत्सर्ग में आज्ञा किहां, किहां आज्ञा अपवाद ।
इकसूं इक विगटे न ते, पिण नहिं छे विषंवाद ॥१२॥
उत्सर्गे आज्ञा नथी, ते कार्य नी जान ।
अपवादे आज्ञा कही, ते विषंवाद मत मान ॥१३॥
विषंवाद रे ऊपरे, कहिये हेतु सार ।
निपुण न्याय वच सांभली, द्वेष हिये मत धार ॥१४॥
बार मास है वर्ष ना, तेह विषे सुविधान ।
अधिक धर्म करिवा तणूं, मास भाद्रवो जान ॥१५॥
तेह विषे पण प्रगट है, अधिक धर्म ना दीह ।
पर्व पर्यूषण प्रसिद्ध हो, पोसह प्रमुख सु लीह ॥१६॥
ते पर्यूषण ने विषे, कल्प सूत्र व्याख्यान ।
तेह विषे वतका कही, सुणज्यो सुगण सुजान ॥१७॥
प्रभू दशमा सुर लोक थी, भव स्थित भोगव तेह ।
चवियां पहलां ने पछे, जाणयुं अवधि करेह ॥१८॥
चवन समय नवि जाणियो, सूक्ष्म काल विशेष ।
इमहिज पनरमध्ययन में, द्वितीय आचाराङ्ग लेख ॥१९॥

कुल चाण्डाले ऊपनो, हरकेशी मुनिराय।
उत्तराध्ययन विषे कह्यु, बारमा अध्ययने मांय ॥८०॥
कर्म ग्रन्थ मांही कह्यो, छट्ठे गुणठाणेह।
नीच गोत नो उदय नहीं, न्याय मिले किम तेह ॥८१॥
अष्टम शतके भगवती, दशम उद्देशे दृष्ट।
जघन्य ज्ञान आराधना, सत अठ भव उत्कृष्ट ॥८२॥
वृत्तिकार कह्यु एह विध, चरित सहित जे ज्ञान।
तेहनी जघन्य आराधना, तसु भव ए पहिछान ॥८३॥
बीजा सम दृष्टि तथा, देश व्रती ना जेह।
भव उत्कृष्ट असंख्या है, न्याय वचन छै एह ॥८४॥
चन्दा विजय ग्रन्थ में, आराधक ना सोय।
आख्या भव उत्कृष्ट तथा, एह मिले नहिं कोय ॥८५॥
अष्टम अङ्गे नेम प्रभू, कृष्ण भणी आख्यात।
तुं तीजी पृथिवी विषे, जास्ये स्थित दधि सात ॥८६॥
तीजी थी अन्तर रहित, निकली सय वारेह।
अमम नाम द्वादशम् जिन, थास्ये महा गुन तेह ॥८७॥
इहां आख्यो अन्तर रहित, तृतीय नरक थी ताहि।
निकली तीर्थङ्कर हुस्ये, तिण सुं बिच भव नांहि ॥८८॥
प्रश्न रतन संचय विषे, आख्यो कृष्ण मुरार।
बालु प्रभा थी नीकली, नर भव लही उदार ॥८९॥

जाण्यां धुर भङ्ग कह्या, तेह सत्य वच जोय।
रवि आथ्यु, कल्पे कह्यु, ते वयण अप्रमाण ॥३०॥
वृहत्कल्प रे पञ्चमें, तनु कारण थी ताय।
सूर्य जगो जाणि ने, आहार लियो मुनिराय ॥३१॥
भोगवतां शङ्का पड़ी, रवि जगो के नाहिं।
अथवा सूर्य आंथम्यो, तथा आंथम्यो नाहिं ॥३२॥
शङ्क सहित इम भोगव्यां, रात्रि भोजन मिच्छ।
भोगवतो पामे तिको, गुरू चौमासी दण्ड ॥३३॥
इमहिज कारण विन रवि, जगो जाणी ताय।
आहार ग्रह्यो पिण शङ्क सहित, भोगवियां दण्ड आय ३४
दशम उद्देश निशीथ में, रात्रि भोजन ताय।
कारण सूं पिण भोगव्यां, दण्ड चौमासी आय ॥३५॥
निशीथ उद्देशे बारमें, चुर्णि विषे अवलोय।
निशि भोजन कारण थकी, भोगवणो कह्यो सोय ॥३६॥
इमहिज वृहत्कल्प तणी, चुर्णि वृत्ति विषेह।
रोगादिक कारण मुनी, निशि भोजन जीमेह ॥३७॥
सूत्र निशि भोजन प्रते, वर्ज्यों ते तो शुद्ध।
चूर्णि विषे ए स्थापियो, तेह प्रत्यक्ष विरुद्ध ॥३८॥
निशीथ उद्देशे पन्नरमें, आखी श्री जिन वांण।
सचित अम्ब चूंसे मुनि, दण्ड चौमासी जांण ॥३९॥

तिण जे विशेष सूत्र नी, अर्थ उत्सर्ग पवेह ।
जेम अछै तिमहिज मिलै, इम कह्यु टबा विषेह ।१००।
टबाकार पिण इम कह्यो. सूत्र थकी विगटेह ।
अर्थ प्रमाण तिको नहीं, तो मुझ दूषण किम देह ॥१०१॥

॥ इति विसंवाद अधिकार ॥

॥ अथ अठारमूं भगवती में निर्युक्ति कही तथा पन्नवणा सामाचार्य्य कृत कहै तसुत्तर अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै निर्युक्ति कही, शत पण बीसमा माहिं ।
तृतीय उदेशे भगवती, तुम्हे न मानूं काहिं ॥ १ ॥
तसु पूछीजे निर्युक्ति, कीहनी कीधी जेह ।
भद्रबाहु कृता तब कहै, चौद पूर्व धर तेह ॥ २ ॥
तसु कहिये जे तुम्ह कही, भद्रबाहु कृत एह ।
तो भगवती सूत्र विषे तिका, किम कही छै तेह ॥ ३ ॥
वीर छता ए भगवती, तेह विषे अवधार ।
किम कहि भद्रबाहु कृता, देखो न्याय विचार ॥ ४ ॥
भद्रबाहु मोड़ा हुआ, पञ्चम अर्क सुजात ।
तौथ अरवीं भगवती, तेह विषे किम यात ॥ ५ ॥

ऋषभ बाहुबलि आउषो, पूर्व चौरासी लक्ष ।
किम तसु शिव गति इक समय, पेखो तज मतपक्ष ॥५०॥
शत चौदशमें भगवती, सप्तम उद्देश विशेह ।
वृत्ति विषे आख्यो तिको, सांभलजो चित देह ॥५१॥
पन्दरसौ प्रति बोधिया, तापस गौतम स्वाम ।
प्रभू पै आवत पामिया, केवल युग अभिराम ॥५२॥
भो साधो ! वन्दो तुम्हे, श्री जिन प्रति शिरनाम ।
इम गौतम आखे छते, जिन भाषै गुण धाम ॥५३॥
ए केवल ज्ञानी तणी, हे गौतम ! मुनिराय ।
लागै तुझ आशातना, वृत्ति विषे ए वाय ॥५४॥
दशवैकालिक सूत्र में, नवमें ध्ययन विशेह ।
प्रथम उद्देशे आरमी, गाथा में इम लेह ॥५५॥
विप्र अग्निहोत्री तिको, अग्नि प्रते शिरनाम ।
आहुती मद मन्त्र पढ़, घृतादि सींचे ताम ॥५६॥
आचार्य प्रते इह विधे, वाहं शिष्य विनीत ।
वर अनन्त ज्ञानी छतो, आराधे इह रीत ॥५७॥
हरीभद्र सूरे करी, वृत्ति विषे इम उक्ति ।
शिष्य केवल ज्ञानी छतो, करै गुरूनी भक्ति ॥५८॥
कह्यु वृत्ति में जिन प्रते, वन्दो गौतम ख्यात ।
तसु प्रभू कही आशातना, किम मिलै ए वात ॥५९॥

तसु कृत आगम किम हुवे, न्याय नेत्र करि जोय ।
सूत्र बृहत् नो लघू करै, तसु कारण नहिं कोय ॥१६॥
दशहिज सूत्र निशीथ प्रति, गयो विसाइ विचार ।
मोटा नूँ छोटो कह्यु, एहवुं दीसै सार ॥१७॥
वलि कहै दशवैकालिक पिण, कह्यु सीजम्भव एह ।
तास नाम नन्दी विषै, किम आख्यो गुण गेह ॥१८॥
गणधर कृत जे भगवती, तास विषै सु विचार ।
नाम नन्दी नूँ पिण कह्यो, हिव तसु उत्तर सार ॥१९॥
जेम पन्नवणा तिमज ए, बृहत् थकी लघू कीध ।
पिण सूत्र थकी कीधी नवी, नथी सम्भवे सीध ॥२०॥
चौदश पूर्व मांहि थी, अर्थ अनोपम सार ।
दशवैकालिक बृहत् पिण, पूर्वे रचित उदार ॥२१॥
ते मोटा नूं ए लघू, मनक पुत्र अर्थेह ।
सूत्र सीजम्भव पिण कह्यु, न्याय सम्भवे एह ॥२२॥

॥ इति निर्युक्ति अधिकार ॥

॥अथ १९मूं नंदी थिरावली अधिकार॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै नन्दी तणी, थिरावली छै तेह ।
गणधर कृत की अन्य कृत, हिव तसु उत्तर देह ॥ १ ॥

शतक सात में भगवती, छट्ठे उद्देश सर्म द ।
छट्ठे आर वैताढ्य बिन, सहु गिर हुस्यै विछेद ॥७०॥
प्रकरण में शत्रुञ्ज गिरि, सप्त हस्त परिमाण ।
रहिस्यै आख्यो तेह वच, प्रत्यक्ष विरुद्ध पिछाण ॥७१॥
अष्टम शतके भगवती, नवम उदेश विषेह ।
माया गूढ माया करै, वचन अलीक वदेह ॥७२॥
कूड़ा तोला नै वलि, कूड़ा माप करेह ।
ए च्यारूंई प्रकार करि. तीरि आयु बन्धेह ॥७३॥
ए चिहुं कारण अशुभ थी, तीर्यंच आयु बन्ध ।
तिण कारण तिर्यञ्च नूं. आयु पाप कथिन्ध ॥७४॥
कर्म्म ग्रन्थ मांही कह्यो, तिर्यञ्च आयु पुन्य ।
ते माटे ए सूत्र थी, वचन विरुद्ध जबुन्य ॥७५॥
पञ्च स्थावर विकलेन्द्रिया, ए पिण तीर्यञ्च आण ।
तास आउखो पुन्य कहै, प्रत्यक्ष विरुद्ध पिछाण ॥७६॥
जघन्य आउखा नुं धणी, तीर्यञ्च मरि नै तेह ।
जो तीर्यञ्च में ऊपजे. कोड़ि पूर्व स्थित केह ॥७७॥
जघन्य आयु पञ्च तिरि तणा, माठा अध्यवसाय ।
कह्या भगवती नै विषे, शतक चौवीसमा मांहि ॥७८॥
अपसत्थ अध्यवसाय सूं, कोड़ि पूर्व तिरि होय ।
तिण सूं ए तिरि आउखो, पाप कृत अवलोय ॥७९॥

दृष्टिवाद तणो धणी, वचन खलायां ताहि।
अन्य मुनी ने इसवो नहीं, दशवैकालिक मांहि ॥१२॥
पञ्चम अङ्ग तृतीय शत, प्रथम उद्देशे ताय।
वैक्रिय शक्ति सुर तणी, अग्नि भूति कहिवाय ॥१३॥
वाय भूति श्रद्धी नहीं, प्रतीत नाणी तेह।
प्रभू ने पूछ्यं खमाविया, द्वादशाङ्ग धर एह ॥१४॥
ठाणा अङ्ग ठाणे सात में, हिन्सा झूठ अदत्त।
शब्द रूप गन्ध फर्श रस, आस्वादी हुवे रक्त ॥१५॥
वलि पूजा सत्कार प्रति, पामी ने हर्षाय।
सावद्य ते इह विध कही, तास सेववूं थाय ॥१६॥
जेम प्ररूपे ते विषे, नथी चालवूं होय।
सप्त प्रकारे जाणवूं, छद्मस्थ प्रति अवलोय ॥१७॥
चौद पूर्व धर पिण करे, पडिक्कमणो विहुं काल।
खलता खामी, नुं तिको, देखो न्याय निहाल ॥१८॥
तिण सुं चौदश पूर्व धर, वलि दश पूरव धार।
जिन साखे आगम रचे, इसो सम्भवे सार ॥१९॥
इमहिज प्रत्येक बुद्धि पिण, जिन साखे सुविचार।
आगम रचवुं सम्भवे, अमल न्याय अवधार ॥२०॥
इम मुज भासे तिम कह्यु, अर्थ अनूप उदार।
फुन केवल ज्ञानी कहै, तेहिज छे तन्त सार ॥२१॥

ब्रह्म कल्प में सुर थई, हुस्ये तीर्थङ्कर देव ।
इम भाख्या तसु पञ्च भव, केम मिलै ए भेव ॥६०॥
इत्यादिक जे सूत्र थी, वृत्ति प्रमुख रै मांहि ।
विरुद्ध वचन छै ते प्रते, किम मानिजै ताहि ॥६१॥
द्वितीय आचाराङ्ग ने विषे. दशम उद्देशे मांय ।
मंस मच्छ कह्यो पाठ में, तास अर्थ कहिवाय ॥६२॥
टवो पार्श्वचन्द्र सूरि क्वत, तेह विषे इम ख्यात ।
वृत्तिकार ए मांस मच्छ, लोक प्रसिद्ध आख्यात ॥६३॥
विरुद्ध सूत्र सुं ते भणी, न संभाविये ए अर्थ ।
वलि गीतार्थ जे वदै. प्रमाण छै ज तदर्थ ॥६४॥
अस्थी शब्दै सूत्र में, कुलिया छै बहु स्थान ।
ए गट्ठिया हरड़े कह्युं, सूत्र पन्नवणा जान ॥६५॥
कह्या दाडिम प्रते बहुट्ठिया. एहवा शब्द प्रभृत ।
अस्थि शब्द कुलिया कह्या, तो मंस शब्द गिर हुन्त ॥६६॥
एहवो सभाविये अछै. ते माटै अवलोय ।
बनस्पतिज विशेष छै, मस मच्छ ए जोय ॥६७॥
भाव उघाड़े मंस मच्छ, चारित्रिया ने जेह ।
कारण थी पिण आहारवो, योग्य नथी दीसेह ॥६८॥
वली सूत्र में साधु ने, उत्सर्ग भाव आख्यात ।
वृत्ति विषे अपवाद ए, भाव तणो अवदात ॥६९॥

भद्रबाहु स्वामी पछै, बहु वर्षे अवधार।
वज्र स्वामी मोड़ा हुवा, देखो न्याय विचार ॥३२॥
निर्मितियो कन्या धनै, एम इहां आख्यात।
पिण निसन्नसो इम नयी कह्यो, देखो सुगण सुजात ॥३३॥
महिमा कीधी देवता, इम इहां आख्यो सोय।
सुर करस्ये महिमा इसो, वचन कह्यो नहीं कोय ॥३४॥
तिण कारण ए निर्युक्ति, भद्रबाहु कृत नांहि।
वलि ए निर्युक्ति विषै, वचन बहु विरुद्ध दिखाहि ॥३५॥
उववाई में भाखियो, उत्कृष्टी अवगाह।
धनुष पंचसय नी तिको, सीझै ए जिन वाय ॥३६॥
आवश्यक निर्युक्ति में, मोरादेवी माय।
सवा पांचसौ धनुष तनु, ए वच कीम मिलाय ॥३७॥
ठाणाङ्ग तूर्थ ठाणा विषै, प्रथम उद्देशा मांहि।
सनत् कुमार चक्री तणी, अन्त क्रिया कही ताहि ॥३८॥
आवश्यक निर्युक्ति में, चक्री सनत् कुमार।
तीजे सुरलोकि गयो, ए वच विरुद्ध विचार ॥३९॥
ऋषभ बाहुबल आउषो, पूर्व चौरासी लक्ष।
समवायङ्ग में भाखियो, पाठ मांहि प्रत्यक्ष ॥४०॥
आवश्यक निर्युक्ति में, ऋषभ बाहुबल राय।
एक समय शिवगत लही, कीम मिलै ए वाय ॥४१॥

थामो नास्ति सोम कुतः. भद्रबाहु अणगार ।
नथी हुन्ता तो तसु कृता. केम निर्युक्ति तिंवार ॥ ६ ॥
सूत्र भगवती ने विषै, कही निर्युक्ति जेह ।
तेह मानवा योग अम्हे, पिण हिवडां नहिं तेह ॥ ७ ॥
तब कहै पट तेवीस में, सामाचार्य्य ताहि ।
सूत्र पन्नवणा तिण करयु, कह्यो पीठका मांहि ॥ ८ ॥
गणधर कृत ते भगवती, तेह विषै सु विचार ।
नाम पन्नवणा नो कह्यो, ते किण विध अवधार ॥ ९ ॥
तसु कहिये ते-पन्नवणा, सामाचार्य्य जोय ।
मोटा नी छोटी करी, एहवु दीसे सोय ॥१०॥
पिण सूल थकी कीधी नवी, दूसो सम्भवे नाहिं ।
दश पूर्वधर ते नहीं, तसु कीधी किम थाय ॥११॥
सम्पूर्ण दश पूर्व धर, चौदश पूर्व धार ।
तास रचित आगम हुवे, वाहु न्याय विचार ॥१२॥
हेमि नाम माला विषै, धुर काण्डे अवदात ।
सुहस्ताद्या वज्रान्ता, दश पूर्व धर आख्यात ॥१३॥
सुहस्त से लेई करी, वज्र स्वामी लग जोय ।
दश पूर्व धर दाखिया, अधिक पूर्व नहिं होय ॥१४॥
स्वामी वज्र थयां पछे, वहु वर्षे सुविमास ।
सामाचार्य्य तो थया, दश पूर्व नहिं जास ॥१५॥

आवश्यक निर्युक्ति-सुनि, कृत मच्छका सें काल-।
मञ्च डाभ ना पूतला, करणा कह्या जु न्हाल ॥५२॥
आवश्यक निर्युक्ति सें, वतिका विरुद्ध अनेक।
चतुर हुवै ते ओलखो, छांडै मत री टेक ॥५३॥
तिण सुं चौदश पूर्व धर, भद्रबाहु अणगार।
तेहनी कीधी किम हुवै, ए निर्युक्ति विचार ॥५४॥
आवश्यक निर्युक्ति सें, कारण थी अणगार।
ग्रहण करे षट काय नैं, कहियै ते अधिकार ॥५५॥
शर्पादिक डसियां छतां, पृथ्वीकाय प्रतेह।
प्रथम अचित्त मांगी लिये, ग्रहस्थ समीपै जेह ॥५६॥
जो मांगी लाधै नहीं, तो पोते आणेह।
कदा अचित लाधै नहीं, तो मिश्र पृथ्वी मांगेह ॥५७॥
मिश्र पृथ्वी लाधै नहीं, तो पोतेहिज जाय।
अटव्यादिक थी मिश्र प्रति, ले आवै मुनिराय ॥५८॥
मिश्र कदा लाधै नहीं, मांगे जई ग्रहस्थी पास।
सचित पृथ्वीकाय प्रति, मांगी ल्यावै तास ॥५९॥
जो मांगी सचित मिलै नहीं, तो पोतेहिज जाय।
खान प्रमुख आगर थकी, ले आवे मुनिराय ॥६०॥
जेह काम आणी तिको, कार्य्य करी ने ताय।
पृथ्वीकाय जे ऊबरै, तेह परिठ्ठवे जाय ॥६१॥

नन्दी पीठका मे विषै, सुधर्म जम्बू स्वाम।
प्रभव सीजम्भव आदि त्यां, पाठ वन्दे बहु ठाम॥ २॥
अनागत जिन तूर्य अङ्ग, वन्दे पाठ न ख्यात।
तेह अनागत मुनि भणी, किम वंदे गणीनाथ॥ ३॥
तिण सूं एह थिरावली, देव वाचक कहिवाय।
पिण गणधर कृत ए नहीं, निर्मल विचारो न्याय॥ ४॥
थिरावली में अन्त कह्युं, अन्य पिण सहु भगवन्त।
प्रथमी ज्ञान प्ररूपणा, कहस्युं तास उदन्त॥ ५॥
नन्दी सूत्र नी वृत्ति में, आख्यो इम अवदात।
दुष्य गणी नो शिष्य जी, देव वाचक इम ख्यात॥ ६॥
इम लेखे नन्दी सूत्र, दुष्य गणी शिष्य देव।
मोटा नूं छोटो कह्युं, ते आणे जिन भेव॥ ७॥
कथा तणी गाथा जिके, नन्दी सूत्र रे मांहि।
देव वाचक कीधी हुवे, एहवुं दीसे न्याय॥ ८॥
दश चौदश पूर्व धरा, आगम रचै उदार।
ते पिण जिनजी साख थी, विमल न्याय सुविचार॥९॥
पिण जिन नी जे साख विन, आगम सूत्र अमोल।
छद्मस्थ कृत किण विध हुवे, तासु न्याय सूँ तोल॥१०॥
चौ नाणी गोयम गणी, चौदश पूर्व धार।
ते पिण वचन खमाविया, सप्तम अङ्ग मझार॥११॥

॥ अथ बीसमूं नदी अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै नदी उतरे, मुनि ईर्य्या समितेह ।
तिहां जिन आज्ञा ते भणी, हिंसक तसु न कहेह ॥ १ ॥
तिम म्हे पिण प्रतिमा भणी, पुष्प चढ़ावां तेह ।
म्हाने पिण जिन आण छै, हिंसा तसु न कहेह ॥ २ ॥
तसु कहिये साधू नदी, उतरे तिहां जिन आण ।
जो पूजा में जिन आण छै, तो मुनि किम न करे जाण ।
वन्दना नी पूछयां थकां, मुनि आज्ञा दे तेह ।
पुष्प चढ़ावूं इम कह्यां, मुनि आज्ञा नहिं देह ॥ ४ ॥
नदी ऊतरे जे मुनि, द्रव्य पूजा कहे तेम ।
हेतु तिण ऊपर कहूं, चतुर सुणो धर पेम ॥ ५ ॥
विहार विषे जल सहित बूक, नदी देख मुनिराय ।
ते टालण रै कारणे, अंवलाई पिण खाय ॥ ६ ॥
बूक कोशादिक अन्तरे, सूकी नदी निहाल ।
तेह प्रते मुनि ऊतरे, उदक सहित दे टाल ॥ ७ ॥
तिम दश दिननां पुष्प जे, सूका ते अवलोय ।
एकण आडी पुष्प फुन, तत्क्षण चूंध्या होय ॥ ८ ॥
किसा चढावो पुष्प तुम, तुझ लेखे इम म्हाल ।
सूका फूल चढावणा, हरिया देणा टाल ॥ ९ ॥

जद कहे चौदश पूर्व धर, भद्रबाहु गुन गेह।
निर्युक्ति तेहनी करी, किम मानूं नवि तेह ॥२२॥
हिव तेहनो उत्तर सुणो, तेह निर्युक्ति मांहि।
हूं वादूं वज्र स्वामी प्रते, एम कह्यु छै ताहि ॥२३॥
जो भद्रबाहु कृत ए हुवे, तो वज्र स्वामी प्रति जेह।
नमस्कार किण विध करै, देखोजी चित देह ॥२४॥
वलि निर्युक्ति में कह्यो, बाल्य अवस्था मांहि।
मेह वर्षतां देवता, आहार निमन्त्र्यो ताहि ॥२५॥
भिण ते आहार वंछ्यो नहीं, सीख्यो विनय आचार।
एहवा वज्र स्वामी प्रते, नमस्कार करूं सार ॥२६॥
नगर उज्जेणी ने विषे, जम्बक नामे देव।
करी परीक्षा ने पछे, स्त्व्यो तास स्वयमेव ॥२७॥
लब्धि अक्षीण माहणसी, तेह तणो धरणाहार।
सीह गिरी प्रशंसियो, वन्दू ते अणगार ॥२८॥
पदानुसारणी लब्धि जसु, दश पुर नगर मझार।
महिमा कीधी देवता, करूं तासु नमस्कार ॥२९॥
जेह कुसुमपुर ने विषे, धन्नो सेठ जिंवार।
धन पुन कन्याइं करी, निमन्त्रियो धर प्यार ॥३०॥
नव जोवन वय ने विषे, वज्र ऋषि गणधार।
नमस्कार तेहने करूं, इम कह्यो निर्युक्ति मझार ॥३१॥

जेह कार्य्य अनुमोदियां, मुनि ने लागे पाप।
तो करणवालो तो धुर करया, तिण में धर्म्म न थाय ॥२०॥
सावद्य कार्य सर्व ही, मुनि त्यागे विष जाण।
आज्ञा तेहनी किम दिये; वाह्रं करो विनाण ॥२१॥
द्रव्य पूजा सावद्य छै, की निर्वद्य कहिवाय।
सावद्य छै तो तेह में, धर्म्म पुण्य किम थाय ॥२२॥
जो पूजा निर्वद्य छै, तो मुनि न करे कांय।
वलि सामायिक पोषह मभ्मे, तुम्हे करो क्यूं नांय ॥२३॥
सामायिक पोषा मभ्मै, पचख्या सावद्य जोग।
निर्वद्य तो त्याग्या नहीं, देखो दे उपयोग ॥२४॥
द्रव्य पूजा आज्ञा मभ्मै, की जिन आज्ञा वार।
जो आज्ञा वारे कहो, तो धर्म्म पुण्य मत धार ॥२५॥
जो ए छै आज्ञा मभ्मै, तो मुनि न करे कांहि।
सामायिक पोषा मभ्मै, तुम्हे करो क्युं नांहि ॥२६॥
द्रव्य पूजा छै विरत में, की अविरत रे मांहि।
जो अविरत मांहीं कहो, तो धर्म्म पुण्य किम थाहि ॥२७॥
द्रव्य पूजा छै विरत में, तो मुनि क्युं न करेह।
सामायिक पोषा मभ्मै, क्यों न करो तुम्हे तेह ॥२८॥
जो पूरी समझ पड़े नहीं, तो राखो प्रभू प्रतीत।
जिन आज्ञा बाहर धर्म्म कही, न करणो एह अनीत ॥२९॥

॥ इति नदी अधिकार ॥

ज्ञाताध्ययनी आठमें, मल्लीनाथ जिनराय।
पोह सुध इग्यारस दिने, चारित्र केवल पाय ॥४२॥
आवश्यक निर्युक्ति में, चारित्र केवल नाथ।
मृगशिर सुध एकादशी, विरुद्ध बचन ए आन ॥४३॥
तेत्र गणधर अजित ना, समवायङ्ग विशेह।
आवश्यक निर्युक्ति में, कह्या पचाणूं जेह ॥४४॥
तूर्य अङ्ग जिन सुविध ना, असी अरु षट गणधार।
आवश्यक निर्युक्ति में, अठ्यासी अधिकार ॥४५॥
तूर्य अङ्ग शीतल तणा, तीन असी सुविचार।
आवश्यक निर्युक्ति में, एक असी गणधार ॥४६॥
तूर्य अङ्ग बासट कह्या, वास पूज्य गणधार।
आवश्यक निर्युक्ति में, छासट्ठ कह्या तिंवार ॥४७॥
गणधर अनन्त प्रभू तणा, सूत्रे चौपन आस।
आवश्यक निर्युक्ति में, आख्या छे पचास ॥४८॥
गणधर धर्म्म प्रभू तणा, सूत्रे अड़तालीस।
आवश्यक निर्युक्ति में, तयांलीस फुन दीस ॥४९॥
तेत्र गणधर शान्ति ना, तूर्य अङ्ग सुणीस।
आवश्यक निर्युक्ति में, आख्या छे षट तीस ॥५०॥
पार्श्व प्रभू ना तूर्य अंग, गणधर अष्ट उदार।
आवश्यक निर्युक्ति में, आख्या दश गणधार ॥५१॥

छः छण्डी आगार ते, राख्यो सावद्य जाण।
सामायिक पोषह मभ्कै, तेहना पिण पच्चखाण ॥१०॥
दीधां अन्य तीर्थिक भणी, धर्म पुण्य जो होय।
तो आणन्दे किम तज्यो, हिये विमासी जोय ॥११॥
उत्तराध्ययने चौदमें, गाथा बारमी मांय।
भृगु प्रते पुत्रां कह्यो, सांभलज्यो चित्त ल्याय ॥१२॥
वेद भण्यां सुत जन्मियां, त्राण शरण नहिं होय।
दियां जिमायां तमतमा, जावै इम कह्यो सोय ॥१३॥
वृतिकार इह विध कह्यो, नरक रोरवा देय।
तो तेहने पोष्यां छतां, किण विध धर्म्म कहेह ॥१४॥
कोई कहै ए गृही हुन्ता, तसु उत्तर अवलोय।
तेहनी धुर गाथा विषे, तूर्य पदे कह्युं सोय ॥१५॥
कुमर आलोची ने वदै, इम कह्यो गणधर देव।
ते माटै तसु सत्य वच, पिण नहीं झूठ कहेव ॥१६॥
वेद भण्यां सुत जन्मियां, त्राण शरण नहिं होय।
ए पिण भृगु प्रते कह्युं, बेहुं पुत्रां अवलोय ॥१७॥
ए वच सांचा तेहनां, तुम्हे जाणो मन मांय।
तो दियां जिमायां तमतमा, ए पिण सांची वाय ॥१८॥
द्वितीय सूयगडांगे सखर, छट्ठाध्ययन रे मांहि।
निज श्रद्धा विप्रे कही, आर्द्र मुनि ने ताहि ॥१९॥

इम कारण थी धुर अचित, मिश्र सचित अपकाय ।
मुनि दातार कने जई, मांगी ल्यावे ताय ॥६२॥
जो मांग्यो जल ना मिले, तो पोतैहिज जाय ।
नदी तलावादिक थकी, आप आवे मुनिराय ॥६३॥
शूलादिक कारण पड्यां, इमहिज तेऊकाय ।
अचित मिश्र फुन सचित प्रते, मांगे ग्रही पै जाय ॥६४॥
जो मांगी अग्नि मिले नहीं, तो पोतैहिज जाय ।
कुम्भ कारादिक स्थान थी, लेइ आवे मुनिराय ॥६५॥
शूलादिक कारण पड्यां, इमहिज वाऊकाय ।
अचित मिश्र फुन सचित प्रति, ग्रहण करै ऋषि ताय ॥६६॥
इमहिज बनस्पति अचित, मिश्र फुन सचित मुनिराय ।
गाढा गाढ कारण पड्यां, ग्रहै सूलादिक ताय ॥६७॥
त्रस बेन्द्रियादिक प्रते, तनु फोडादिक होय ।
तास मिटावा मुनि ग्रहै, जलोक आदि सुजोय ॥६८॥
आवश्यक निर्युक्ति में, परिट्ठावणिया समितेह ।
आखी छै ए वारता, किम मानीजै एह ॥६९॥

॥ इति थिरावली अधिकार ॥

तिम सावद्य दान प्रशंसियां, कर्म्म तणो बंध थाय।
तो दान दियै ते धुर करण, तसु अघ बंध अधिकाय ॥३०॥
दान निषेधयां वृत्ती नी, छेद करै इम ख्यात।
कह्यो अर्थ में काल ए, वर्त्तमान मे थात ॥३१॥
मिलतो अर्थ ए सूत्र थी, देखो न्याय विचार।
ठाम ठाम सूत्रे कह्यो, सावद्य दान असार ॥३२॥
असंजती ने दान दे, पाप एकन्त आख्यात।
सूत्र भगवती ने विषे, देखो तज पखपात ॥३३॥
ते माटै वर्त्तमान जे, काल विषै जे मून।
मून कहै तिहुं काल में, श्रद्धा तास जबून ॥३४॥
द्वितीय सूयगडांगे विषे, पञ्चमअध्ययने पेख।
देतो, लेतो एहवो, वर्त्तमान में देख ॥३५॥
पुण्य पाप नहिं कहै तिहां, एहवु वच अवलोय।
ते माटै वर्त्तमान हिज, काले मून सुजोय ॥३६॥
कह्यो उपासक अङ्ग में, सुत सकडाल उदार।
गोशालक ने आपिया, फलग सेज्झा संथार ॥३७॥
कह्यो प्रभू ना गुण करया, तिण स्युं आपूं सोय।
पिण निश्चय नहिं धर्म्म तप, इम कह दीधा जोय ॥३८॥
दीधां गोशालक भणी, नहीं धर्म्म तप सद्य।
तिमज अनेरा ने दियां, कीम हुवै पुण्य बन्ध ॥३९॥

जो चाढो तत्काल ना, शुष्क पुष्प न चढाय ।
जद तो पुष्प नदी तणो, मिल्यो न सरिषो न्याय ॥१०॥
उदक सहित टाले नदी, मुनि अंवलाई खाय ।
तिण कारण हणवा तणु, ते कामी नहिं ताय ॥११॥
हरित पुष्प चाढ़ो तुम्हे, शुष्क पुष्प न चढ़ाय ।
इण कारण हणवा तणो, तुम्हे कामी इणन्याय ॥१२॥
तिण सुं पुष्प नदी तणो, नथी सरिषो न्याय ।
द्रव्य पूजा नी आण नहीं, नदी जिन आज्ञा मांय ॥१३॥
जिन आज्ञा देवे जिको, निर्वद्य कारज जान ।
जिन आज्ञा देवे नही, ते सावद्य कार्य्य मान ॥१४॥
सुर सुर्याभ भणी प्रभु, वन्दन आज्ञा ख्यात ।
नाटक नी पूछ्यां थकां, आण न दीधी नाथ ॥१५॥
मन में भलो न जाणियो, मौन रह्या अवलोय ।
तिण सु ए नाटक कियो, ते सावद्य कार्य होय ॥१६॥
प्रभूजी जे नाटक तणी, आज्ञा दीधी नांय ।
तो किम द्रव्य पूजा तणी, आज्ञा दे जिनराय ॥१७॥
मुनि दीक्षा लेतां किया, सावद्यरा पच्चखान ।
न करे द्रव्य पूजा तिको, सावद्य कार्य्य मान ॥१८॥
सावद्य कार्य प्रते मुनि, करे करावे नांय ।
अनुमोदे पिण नहिं तिको, निमल विचारो न्याय ॥१९॥

नित्य हजारां मण तदा, धान रांधता जाण।
हुवे हजारां मण तिहां, अग्नि मांणी घमसाण ॥५०॥
उदक विषे फु'वारादि फुन, वलि वनस्पती जल मांय।
लूण मणां बन्ध लागतो, अनेक लूवा तसकाय ॥५१॥
वायु जीव विराधना, ते पिण तिहां विशेष।
मोटो आरम्भ ए सही, दानशाला में देख ॥५२॥
दिन दिन प्रति षटकाय हणा, अनन्त जीवांरी घात।
न गिणे पाप हिंसा तणो, तसु घट मांहि मिथ्यात ॥५३॥
असंयती बहु पोषियां, करे षटकाय विणाश।
धर्म पुण्य किम तेह में, जोवो हिये विमास ॥५४॥
धर्म हेतु प्रति जीव ने, हणियां दोष न कोय।
कह्यु' अनार्य वचन ए, आचारङ्ग जोय ॥५५॥
कह्यो धर्म रे कारणे, जीव न हणवूं कोय।
ए आर्य नो वचन है, धुर अङ्ग अवलोय ॥५६॥
तिण सूं प्रदेशी तणी, दानशाला पहिछाण।
श्री जिन आज्ञा बार है, समझो चतुर सुजाण ॥५७॥
ज्ञाता अध्ययने तेरमें, जे नन्दन मणिहार।
नन्दा पुष्करणी तणो, आख्यो बहु विस्तार ॥५८॥
चिहु' दिश च्यारूं बाग फुन, चिहु' बाग चिहु' शाल।
पूर्व बाग विषे प्रवर, चित्रशाला सुविशाल ॥५९॥

॥ अथ इक्कीसमूं दानाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

असंयती ने जाण ने, वा श्रावक ने कोय ।
दान दियां स्युं फल हुवे, तसु उत्तर अवलोय ॥ १ ॥
अष्टम शतकें भगवती, छट्ठे उद्देशे जोय ।
गौतम पूछ्यो वीर प्रति, हे प्रभू ! श्रावक कोय ॥ २ ॥
तथा रूप जे असंजति, तसु सचित्त अचित असणादि ।
अणेषणी फुन एषणीक, प्रति लाभ्ये स्युं सम्वाद ॥ ३ ॥
तेहने स्युं फल सम्पजे, तब भाषे जिनराय ।
एकान्त पाप हुवे तसु, निरजरा किञ्चित नांय ॥ ४ ॥
एकान्त पाप कह्यो प्रभू, प्रगट पाठ मे जोय ।
तो ते दान दियां छतां, धर्म्म पुण्य किम होय ॥ ५ ॥
वलि सातमां अङ्ग में, प्रथम अध्ययन मझार ।
वीर भणी आणन्द कह्यो, अन्य तीर्थी प्रति धार ॥ ६ ॥
अन्य तीर्थिक ना देव प्रति, फुन जिन ना मुनिराय ।
अन्य तीर्थिक में जई मिल्या, तिणे संग्रह्या ताय ॥ ७ ॥
ए तिहुं प्रति वन्दू नहीं, वलि न करूं नमस्कार ।
पहली बोलाऊं नहीं, एक वार बहु वार ॥ ८ ॥
असणादिक नहिं द्युं तसु, वलि देवावूं नांहिं ।
एहवु अभिग्रह आदर्यो, देखो आगम मांहि ॥ ९ ॥

रुधिरे खरड्यो वस्त्र जे, जलादि करि शुद्ध होय।
तिम हिंसादिक अघ तज्यां, जीव निर्मल हुवे सोय ॥७०॥

सचित अचित सहु ने दियां पुण्य कहे छै जेह।
कीड़ायत चोखी तणा, न्याय विचारी लेह ॥७१॥

दशमें ठाणे देखल्यो, प्रभू कह्या दश दान।
संक्षेपे कहिये तिके, सुणजो चतुर सुजाण ॥७२॥

सचित अचित जल अन्न लवण, अग्नि जमीकन्द जान।
अनुकम्पा आणी देवे, ते अनुकम्पा दान ॥७३॥

द्वितीय दान संग्रह कह्यो, पोषे बन्दीवान।
तथा छुड़ावे दाम दे, चोर प्रमुख ने जान ॥७४॥

ग्रह वारड़ा जाणी करी, थावरिया ने जान।
देवे भय आणी करी, ते तीजो भय दान ॥७५॥

खर्च करे मृत केडवा, जीवत वारियो जान।
आध छमासी प्रमुख ते, तूर्य कालूणी दान ॥७६॥

बहु नी लज्जाइं करी, सचित अचित धन धान।
दिये असंजती ने जिको, पञ्चम् लज्जा दान ॥७७॥

मुकलावो पैरावणी, जश अहङ्कारे जान।
दिये रावलिया प्रमुख ने, छट्ठो गार्व दान ॥७८॥

कुशील नो अर्थी जिको, गणिकादिक ने जान।
दिये द्रव्य तेह ने कह्युं, सप्तम अधर्म दान ॥७९॥

जीमावे द्विज सहस्र बे, तसु पुण्य खन्ध बंधाय ।
तेह पुण्य थी सुर हुवे, वेद विषे ए वाय ॥२०॥
आद्र मुनि कह्यो सहस्र बे, दीक्षा जीमावे जेह ।
तेह नरक में ऊपजे; अति अभिताप विषेह ॥२१॥
प्रगट पाठ में वात ए, आद्र मुनि वच जोय ।
तो असंयती रा दान में, धर्म्म पुण्य किम होय ॥२२॥
कोई कहे छद्मस्थ था, आद्र मुनि तिहवार ।
कह्युं ताथा में तेह वच, किम कहिये तसु सार ॥२३॥
तसु कहिये आद्र मुनि, चरचा करी विशाल ।
बौद्ध मती गौशाल सूं, साग मती सूं न्हाल ॥२४॥
एक डण्डिया प्रमुख ने. उत्तर दिया विचार ।
तेह सत्य जाणो तुम्हे, तो ए पिण सत्य उदार ॥२५॥
जाव अन्य प्रति सत्य छै, ब्राह्मण प्रति अवदात ।
उत्तर असत्य कहो तुम्हे, आ किसा लेखा री वात ॥२६॥
सूत्र सूयगडांग चारमें, दान प्रशंसे सन्त ।
वध बंछै षट काय नो, इम भाख्यो भगवन्त ॥२७॥
तृतीय करण प्रशंसियां, हिन्सक कहिये ताहि ।
तो दान देवे ते धुर करण, ते हिंसक किम नाहिं ॥२८॥
करै प्रशंसा कुशील री, तासु कर्म्म बन्ध होय ।
तो सेवै ते तो धुर करण, स्युं कहिये तसु सोय ॥२९॥

प्रत्यक्ष अधर्म पेख ।
वेश्या ने देवे तिको, अधर्म नाम सम्पेख ॥९०॥
दीसै लोक विषे तसु, अधर्म नाम सम्पेख ॥९०॥
धर्म दान विन शेष अठ, ते पिण अधर्म जान ।
गुण निष्पन् ए नाम तसु, भाष्या श्री भगवान ॥९१॥
श्री जिनवर जे दान री, आज्ञा नहीं दे कोय ।
धर्म पुण्य नहिं तेह में, हिये विमासी जोय ॥९२॥
दशमें ठाणे धर्म दश, पाषण्ड धर्म आख्यात ।
पिण ते नहिं आज्ञा विषे, तिमहिज दान अवदात ।९३।
मूल चारित्र जे धर्म वे, श्री जिन आज्ञा मांहि ।
तिमहिज जिन आज्ञा विषे, धर्म दान कहिवाय ॥९४॥
जिन आज्ञा जे धर्म नी, ते निर्वद्य पहिछाण ।
आज्ञा नहिं जिण धर्म री, ते तो सावद्य जाण ॥९५॥
जिन आज्ञा जे दान नी, ते निर्वद्य अवलोय ।
आज्ञा नहिं जे दानरी, ते सावद्य छे सोय ॥९६॥
दशमें ठाणे स्थिवर दश, भाष्या श्री भगवान ।
सावद्य निर्वद्य ओलखो, जिन आज्ञा करि जान ॥९७॥
तिमहिज जिन आज्ञा करी, सावद्य निर्वद्य दान ।
ओलख ने निर्णय करे, ते कहिये बुद्धिवान ॥९८॥
नवमें ठाणे पुण्य बन्ध, नव विध समुच्चे ख्यात ।
अन्नपुण्य फुन पाणपुण्य, लेणपुण्य विख्यात ॥९९॥

दुःख विपाक मांही कह्यो, मृगालोढो देख।
गौतम पूछ्यो वीर प्रति, पूर्व भवे इण पेख ॥४०॥
स्यूं दीधो स्यूं भोगव्यो, इम पूछ्यो गणिराय।
तिण सुं दान कुपात्र ना, फल अति कटुक कहाय ॥४१॥
प्रदेशी केशी भणी, बोल्यो एहवो वाय।
च्यार भाग ए राज रा, हूं करस्युं मुनिराय ॥४२॥
एक भाग राण्यां निमित्त, दूजो भाग खजान।
तीजो हय गय अर्थ हो, चौथो देवा दान ॥४३॥
च्यारूं सावद्य जाण ने, मौन रह्या मुनिराय।
तीन भाग जिम तूर्य पिण, जाणो सावद्य ताय ॥४४॥
पिण न कह्यो त्रण भाग तो, हेतु अघ नो राश।
तूर्य भाग तो पुण्य बन्ध, इम न कह्यो गुण तास ॥४५॥
च्यारूं भाग बोलाय ने. प्रदेशी राजान।
निज लफरो मेटी थयो, धर्म करण सावधान ॥४६॥
तूर्य भाग दान तालके, नित प्रते धान रंधाय।
वणी मग रांक जिमायिवे, तिहां जीव हिंसा अधिकाय ४७
सत सहस्र जे ग्राम नां, च्यार भाग तसु कीध।
दान तालके थापियो, चौथो भाग प्रसिद्ध ॥४८॥
दान तालके ग्राम था, साढ सतरै सौ जेह।
तसु हांसल धान रंधाय ने, दानशाला मांडेह ॥४९॥

बलि सूझता उदक प्रति, पायां तसु पुण्य होय।
अथवा उदक असूझतो, पायां पुण्य अवलोय ॥११०॥
पात्र दीधां पुण्य है, तथा कुपात्र विशेह।
मुनि प्रति दीधां पुण्य है, तथा असाधु प्रतेह ॥१११॥
चोर कसाई ने दियां, वलि गणिका प्रति जोय।
तुभ लेखे सहु ने दियां, पुण्य बन्ध अवलोय ॥११२॥
लयणपुण्य समुच्चय कह्यो, ते जागां नवी कराय।
छकाय हणी दे तासु पुण्य, के सीधी दीधां थाय ॥११३॥
पात्र ने दीधां पुण्य है, तथा कुपात्र विशेह।
मुनि प्रती दीधां पुण्य है, तथा असाधु प्रतेह ॥११४॥
गणिका चोर कसाई प्रते, दीधां पुण्य बंधाय।
समुच्चय लयणपुण्य कह्यो, उत्तर देवो ताय ॥११५॥
सयणपुण्य समुच्चय कह्यो, रूंख कटाय कटाय।
पाट बाजोट कराय ने, दीधां पुण्य बंधाय ॥११६॥
के सीधा दीधां पुण्य है, पात्र कुपात्र भणीज।
साधु असाधु ने दियां, ते किण से पुण्य कहीज ॥११७॥
गणिका चोर कसाई प्रते, दीधां पुण्य अवलोय।
समुच्चय सयणपुण्ये कह्यो, उत्तर देवो सोय ॥११८॥
वस्त्रपुण्य समुच्चय कह्यो, कपड़ा नवा बनाय।
धोवाय दीधां पुण्य है, के सीधा दीधां ताय ॥११९॥

विविध रूप चित्रा तिहां, नयना ने सुखदाय ।
नाटक ना धुङ्कार बहु, जन मन हुलसत थाय ॥६०॥
दानशाला दक्षिण बने, दिये दान दगचाल ।
जीमाये बणी मग रांक बहु, भोजन विविध रसाल ।६१।
तीगच्छ शाला पश्चिम बने, राख्या वैद्य सुताम ।
औषध करी रोगी भणी, करे अधिक आराम ॥६२॥
शुभ अलङ्कार उत्तर बने, नाई प्रमुख बैसाय ।
रोगी प्रमुख भणी तिहां, खिजमत स्नान कराय ॥६३॥
इम बहु असंयती भणी, सुख साता उपजाय ।
उपना केहड़े सोल गद, नन्दन रे तनु मांय ॥६४॥
काल करी मीडक हुवो, निज पुष्करणी मांय ।
सावद्य कार्य ना कटुक फल. निमल विचारो न्याय ।६५।
ज्ञाताध्ययने आठमें, देखो चतुर सुमर्म ।
चोखी सन्यासण कह्यं, दान धर्म शुचि धर्म ॥६६॥
दान धर्म शुचि धर्म कर, निरविघ्न स्वर्गे जाय ।
मल्लि भणी चोखी कही, ए निज श्रद्धा ताय ॥६७॥
तव मल्लि कह्यो चोखी भणी, रुधिरे खरड्यो जेह ।
वस्त्र लोही सूं धोवियां, शुद्ध हुवे किम तेह ॥६८॥
तिम अष्टादश पाप प्रति, सेवे जे कोई जन्त ।
तेह निमल किण विध हुवे, दीधो एह दृष्टान्त ॥६९॥

नमस्कार समुच्चय कह्यो, सिद्ध साधु प्रति जोय।
नमस्कार कियां पुराय छै, के अन्य प्रते कीधां होय ॥१३०॥
कुत्ता भाई राम राम, कागा भाई राम।
इम चाराडाल भणी नम्यां, पुराय छै के नहिं ताम ॥१३१॥
विनय करै सघला तणो, विनय वादी अवलोय।
तसु पाषराडी प्रभु कह्यो, सूत्रे ए वच जोय ॥१३२॥
जो नमस्कार सहु ने कियां, पुराय कहै मति मन्द।
ते केड़ायत जाणवा, विनय वादी रा अन्ध ॥१३३॥
अन्नपुराय समुच्चय कह्यो, ते माटै अवलोय।
सहु ने अन्न दीधां थकां, पुराय कहै जे कोय ॥१३४॥
तसु लेखै समुच्चय कह्या, मनपुराय वचपुराय काय।
ए पिण अशुद्ध तीनो थकी, पुराय तणो बन्ध थाय ॥१३५॥
जो सावद्य मन वच काय थी, पुराय बंध नहिं थाय।
अन्न पिण दियां कुपात्र ने, पुराय बंधे किणन्याय ॥१३६॥
नमस्कार पुन्ये अपि, समुच्चय कहिये पेख।
सहु ने नमण कियां थकां, पुराय बन्ध तसु लेख ॥१३७॥
गणिका चोर कसाई प्रति, कर जोड़ी नमस्कार।
कीधां पिण पुराय बन्ध हुवै, जसु लेखै अवधार ॥१३८॥
सर्व भणी जो अन्न दियां, वलि सहु ने नमस्कार।
कीधां पुराय तो देखलो, सप्तम अङ्ग मझार ॥१३९॥

धर्म दानवर आठसूं, तीन भेद है तास।
सूत्र सुपात्र दान फुन, अभय दान गुण राश ॥८०॥
आगम अर्थ बताय ने, तसु मिथ्यात्व मिटाय।
शुद्ध समकित पमावियै. सूत्र दान कहिवाय ॥८१॥
वर महाव्रत धारी मुनि, दियै सूजतो तास।
दान सुपात्र तसु कह्यो, द्वितीय भेद सुविमास ॥८२॥
भय नहिं दे जंतू भणी, हणवारा पच्चखाण।
ते अभय ए भेद त्रण, धर्म्म दान रा जाण ॥८३॥
सचितादिक जे द्रव्य बहु, दियै उधारा जेम।
ध्यान पाछो लेवा तणो, नवम काएन्ती एम ॥८४॥
लेणायत ने जिम दियै, हांतो नेंता. देय।
दियां पछै पाछो लियै, दशम कएन्ती तेय ॥८५॥
धुर वोहरा जिम उभय ए, दियां प्रथम दे तेह।
ते नवसूं फुन दशम जे, दियां पाछो दे जेह ॥८६॥
धर्म दान अष्टम तिको, श्री जिन आज्ञा मांहि।
शेष दान नव छै तिका, जिन आज्ञा में नांहि ॥८७॥
असंजती ने दान दे, तसु कह्यो अघ एकान्त।
नव ही दान तेहने विषे, देखोजी बुद्धिवन्त ॥८८॥
ए दश दान कह्या तिके, गुण निष्पन्न तसु नाम।
पिण जिन आज्ञा बाहिरो, ते सावद्य अघ धाम ॥८९॥

जागां पाट बाजोटादि नो, पड़ै साधु रै काम।
कपड़ो पिण साधू तणो, अवश्य चाहिजे ताम ॥१५०॥
इम कल्पै साधू भणी, आख्या तेहिज बोल।
देखोजी देखो तुम्हे, आंख हीया री खोल ॥१५१॥
साधू बिन जो अन्य प्रति, दीधां पुण्य जो होय।
तो गाय पुण्य किम नवि कह्यो, भैंस पुण्य पिण जोय ।१५२
सुवरण पुण्य रूपो पुण्य, हीरो पुण्य उदार।
मोती ने माणिक पुण्य, खेती पुण्य विचार ॥१५३॥
इत्यादिक मुनिवर भणी, नहिं कल्पै ते बोल।
सुत्र विषे ते नवि कह्या, देखोजी दिल खोल ॥१५४॥
मुनि प्रति नहिं कल्पै तिको, एक ही बोल कहन्त।
तो तुम्हे कहता अन्य प्रति, दीधे पिण पुण्य हुन्त ॥१५५॥
जब को कहै कह्यो अर्थ मे, पाले अन्न दीधेह।
तीर्थंङ्कर नामादि जे, पुण्य प्रकृति बंधेह ॥१५६॥
पात्र थकी जो अन्य प्रति, दियां अनेरी ताहि।
पुण्य प्रकृति बन्धे इसो, कह्यो अर्थ रै माहिं ॥१५७॥
तसु कहिजे जे पात्र ने, दीधे छता जु तेह।
तीर्थंङ्कर नामादि जे, पुण्य प्रकृति बंधेह ॥१५८॥
आदि शब्द में तो जिके, पुण्य प्रकृति सहु आय।
इक ही बाकी नवि रही, निमल विचारो न्याय ॥१५९॥

सयणपुण्य फुन वस्त्रपुण्य, मनपुण्य वचपुण्य काय ।
नमस्कारपुण्ये नवम, समुच्चे ही कहिवाय ॥१००॥
कोई कहै अन्नपुण्य इम, समुच्चय आख्यो स्वाम ।
ते माटे सहु ने दियां, पुण्य बन्ध छै ताम ॥१०१॥
इम कहै तेहने पूछिये, अन्नपुण्य आख्यो सोय ।
के कोरो दीधां पुण्य हुवे, के काचो दीधां होय ॥१०२॥
के अन्नपुण्य रांध्यो दियां, सचित दियां पुण्य थाय ।
तथा अचित्त दीधां थकां, पुण्य बन्ध कहिवाय ॥१०३॥
दियां सूझतो पुण्य है, वा असूझतो दियेह ।
पात्र प्रति दीधां पुण्य है, तथा कुपात्र विषेह ॥१०४॥
मुनि प्रति दीधां पुण्य है, तथा असाधू प्रतेह ।
चोर कसाई ने दियां, वलि गणिका प्रतेज देह ॥१०५॥
समुच्चय आख्यो अन्नपुण्य, ते माटे अवलोय ।
सहु ने दीधां पुण्य नो, तुझ लेखे बन्ध होय ॥१०६॥
इम तसकर गणिकादि जे, सहु ने दीधां पुण्य ।
तिणसुं सघला पात्र है, नहिं कुपात्र जघन्य ॥१०७॥
पाणपुण्य समुच्चय कह्यो, ते अचित्त पायां पुण्य होय
के सचित्त उदक पायां थकां, पुण्य बंध तसु जोय १०८
जो सचित्त पायां थी पुण्य हुवे, तो अणगयो पावेह ।
अथवा अणगया उदक प्रति, पायां पुण्य कहेह ॥१०९॥

इत्ती माने तसु लेख पिण, पुण्य पाते ज दियेह ।
अर्थ न माने एह तिण, वृत्ति न मानी तेह ॥१७०॥

सूत्र भगवती सुयगडांग, उत्तराध्ययन उलास ।
असंजती प्रति दान दे, कह्या अशुभ फल तास ॥१७१॥
इम जाणी उत्तमा नरां, राखो सूत्र प्रतीत ।
श्रीजिन आण उथाप ने, मती को करो अनीत ॥१७२॥

ठाणा अङ्ग ठाणे तूर्य वर, तूर्य उद्देशा मांय ।
च्यार मेह प्रभू आखिया, सांभलज्यो चित्तल्याय ॥१७३॥
इक वर्षे जे खेत्र मे, अखेत वर्षे नांहि ।
अखेत वर्षे एक पिण, खेत्र न वर्षे ताहिं ॥१७४॥

इक खेत्रे पिण वर्षतो, अखेत्रे पिण वर्षाय ।
इक खेत्रे नहिं वर्षतो, अखेत वर्षे नांहि ॥१७५॥
इण दृष्टान्ते पुरुष नी, च्यार जाति कहिवाय ।
देवै पात्र विषे जु इक, दिये कुपात्रे नांहि ॥१७६॥

इह विध कह्या कुपात्र ने, कुखेत्र सु वर न्याय ।
बायो जिहां ऊगे नहीं, ते कुखेत्र कहिवाय ॥१७७॥
ते माटै जु कुपात्र ने, दीधां शुभ अङ्कुर ।
ऊगे नहिं तिण कारणे, कह्या कुखेत्र भूर ॥ १७८॥

॥ इति दानाधिकार ॥

पात्रेज दीधां पुण्य है, तथा कुपात्र विषेह ।
साधु असाधु ने दियां, किण मे पुण्य कहेह ॥१२०॥
गणिका चोर कसाई प्रते, दीधां पुण्य बंधाय ।
समुच्चय वत्थपुण्य कह्यो, उत्तर देवो न्याय ॥१२१॥
मनपुण्ये समुच्चय कह्यो. सावद्य अशुद्ध जवुन्य ।
मन प्रवर्त्तायां पुण्य छै, के निर्वद्य मन थी पुण्य ॥१२२॥
पञ्च आस्रव सेवण तणा, मन थी पुण्य बंधाय ।
पञ्च आस्रव छोडण तणा, मन थी पुण्य बंध थाय ॥१२३॥
समुच्चय मनपुण्ये कह्यो, सावद्य मन प्रवर्त्ताय ।
ते थी पुण्य बंधै के नहिं, उत्तर देवो ताय ॥१२४॥
वचपुण्ये समुच्चय कह्यो, सावद्य अशुद्ध जवुन्य ।
वच बोल्यां थी पुण्य छै, के निर्वद्य वच थी पुण्य ॥१२५॥
समुचय वचपुण्ये कह्यो, मुख से बोले गाल ।
एक गुणे नवकार शुद्ध, किण थी पुण्य बंध न्हाल ॥१२६॥
कायपुण्ये समुचय कह्यो, सावद्य तन प्रवर्त्ताय ।
तेह थकी पुण्य बंध हुवे, के निर्वद्य तनु थी थाय ॥१२७॥
शीत तप्त तनु थी खमै, ते थी पुण्य बंधाय ।
गेहूँ पीसे छेदे हरी. तेथी पुण्य बन्ध थाय ॥१२८॥
हिन्सा झूठ अदत्त फुन, चौथो आस्रव ताहि ।
समुचय कायपुण्ये कह्यो, इण थी पुण्य के नाहि ॥१२९॥

ग्रहस्थ ने देवो तज्यो, स्यूं जाणो मुनिराय।
ते ससार भ्रमण तणो, हेतु जाणी ताय॥ ९॥

सुयगडांग नवमें कह्यो, गाहा तेवीसम् ताहि।
तिण सूं श्रावक आवियो, प्रत्यक्ष ग्रहस्थ मांहि॥१०॥

पनरमोद्देश निशीथ में, मुनि अन्य तीर्थी प्रतेह।
अथवा ग्रहस्थ प्रते वली, अशणादिक आपेह॥११॥

वस्त्र पात्र फुन कम्बली, रजोहरण सुविचार।
ए आठ बोल देवे तसु दण्ड चौमासी धार॥१२॥

देतां प्रति अनुमदियां, दण्ड चौमासी आय।
ते माटे ग्रहस्थ विषे, श्रावक पिण इहां आय॥१३॥

तसु मुनि पोते दे नहीं, वलि जसु देवे कोय।
अनुमोदे नहि तेहने, ऋषि आचार सु जोय॥१४॥

तृतीय करण अनुमोदियां, दण्ड चौमासी आय।
तो प्रथम करण देवे तसु, धर्म पुण्य किम थाय॥१५॥

पड़िमाधारी पिण इहां, आयो ग्रहस्थ विषेह।
तसु अशनादिक नहि दिये, महा मुनि गुण गेह॥१६॥

ते पड़िमाधारी प्रते, ग्रहस्थ दिये को आहार।
तो मुनि अनुमोदे नही, देखो न्याय विचार॥१७॥

देता प्रति अनुमोदियां, मुनिवर ने दण्ड आय।
तो देणवाला ने धर्म किम, तसु खाणो अव्रत मांहि॥१८॥

अन्य तीर्थी ने नहिं कल्पे, वन्दना ने नमस्कार ।
असणादिक पिण द्युं नहीं, आनन्द कह्यु उदार ॥१४०॥
मुनि विन अन्य प्रति अन्न दियां, वलि कियां नमस्कार ।
पुण्य हुवे तो किम लियो, आनन्द अभिग्रह सार ॥१४१॥
जसु अन्न दीधां पुण्य हुवे, तेह ने पिण शिरनाम ।
नमस्कार कीधां छतां; पुण्य हुवे छे ताम ॥१४२॥
ते नव ही निर्वद्य छे, साधू ने नमस्कार ।
कीधां पुण्य छे तो तसु, अन्न दीधां पुण्य सार ॥१४३॥
जल पिण निरदोषण तसु. दीधां पुण्य सु देख ।
जागां पिण तसु सूझती, आप्यां पुण्य सु पेख ॥१४४॥
सयण पाट प्रमुख तसु, दीधां पुण्य सो जोय ।
वस्त्र पिण निरदोषण तसु, दीधां थी पुण्य होय ॥१४५॥
मन वच काया पिण वलि, निरवद्य थी पुण्य बन्ध ।
नमस्कार पद पञ्च प्रति, कीधां पुण्य सु सन्ध ॥१४६॥
निरवद्य रै लेखे नवूं, बोल सरीषा शुद्ध ।
नवूं सरीषा नवि कहै, श्रद्धा तास विरुद्ध ॥१४७॥
साधू ने कल्पे जिके, तेहिज द्रव्य आख्यात ।
द्रव्य अनेरा नवि कह्या, देखो तज पखपात ॥१४८॥
अन्न साधु रै जोड़ये, जल पिण मुनि रै ताय ।
चाहिजे तिण कारणे, पांचपुण्य कहिवाय ॥१४९॥

व्यावच ग्रहस्थ तणो कह्यो, दशवैकालिक मांहि ।
अणाचार अट्ठवीसमो, तृतीय अध्ययने ताहि ॥२९॥
गृही व्यावच मुनि नहीं करैं, नथी करावे जाण ।
करतां अनुमोदे नहीं, त्रिविध २ पच्चखाण ॥३०॥
ग्रहस्थ प्रति पूछे मुनि, सुख साता छे तोय ।
अणाचार ते सोलमों, दशवैकालिक जोय ॥३१॥
सुख पूछ्यां वञ्छी तिणे, साता तसु अणाचार ।
तो गृही ने साता कियां, किम हुवै धर्म उदार ॥३२॥
दशाश्रुतस्कंधे ग्यारमी, पड़िमा में सम्पेख ।
पेज्ज बंधण तूटो नहीं, न्यात तणो सुविशेष ॥३३॥
ते माटे कल्पै तसु, न्यात तणो जे आहार ।
इम पेज्ज बंधण खाते कह्यो, भिक्षाचरी तसु धार ॥३४॥
पेज्ज बंधण ना अशुभ फल, ते माटे अवलोय ।
तसु खाते भिक्षाचरी, ते पिण सावद्य जोय ॥३५॥
भगवती अष्टम शत विषे, पञ्चमुद्देशक जान ।
गौतम पूछ्यो गृही करी, सामायिक मुनि स्थान ॥३६॥
तसु भण्ड तस्कर अपहर्यां, सामायक चीतार ।
भण्ड नी करै गवेषणा, श्रावक तेह तिंवार ॥३७॥
हे प्रभु ! ते निज भण्ड तणी, करै गवेषणा सोय ।
के पर भंड नी ते करे, गवेषणा अवलोय ॥३८॥

ऋषभादिक कहिवे इहां. जिन चउवीस सु आय ।
गौतमादिक गुणवे करी, चउद सहस्र मुनिराय ॥१६०॥
तिम तीर्थङ्कर नामादि इम, आदि शब्द रै मांहि ।
पुण्य प्रकृति आवी सहु, बाकी रही न कांय ॥१६१॥
पात्र थकी जो अन्य प्रति, दियां अनेरी जाण ।
पुण्य प्रकृति बंधे तिको, अर्थ विरुद्ध पहिछाण ॥१६२॥
आदि शब्द में तो जिके, पुण्य प्रकृति सहु आय ।
वलि अनेरी पुण्य नी, प्रकृति किसी कहिवाय ॥१६३॥
किणहिक ठाणा अङ्ग में, छै ए अर्थ जघन्य ।
सहु ठाणा अङ्ग में नहीं, पाठ विना अर्थ शून्य ॥१६४॥
अन्य प्रति दीधां अन्न जे, पुण्य प्रकृति बधेह ।
वृत्ति विषे ए नवि कह्यो, अभयदेव सूरेह ॥१६५॥
पात्रे अन्न देवा थकी, जे तीर्थङ्कर नामादि ।
पुण्य प्रकृति नो बंध ते, अन्नपुण्य संवाद ॥१६६॥
वृत्ती विषे इतरोज छै, पिण अन्य प्रति दीधां सोय ।
बंधे अनेरी पुण्य प्रकृति, एहवुं कह्यो न कोय ॥१६७॥
पाठ विषे पिण ए नही, वृत्ती विषे पिण नांहि ।
सूत्र थकी पिण नहि मिले, ए विरुद्ध अर्थ इण न्याय ॥१६८॥
अन्नपुण्य को अर्थ शुद्ध, वृत्ती विषे कह्युं सोय ।
पात्रे दीधां पुण्य कह्युं, प्रत्यक्ष ही अवलोय ॥१६९॥

ममत्व तजी नहीं ते भणी, धन तेहनो ज कहाय ।
तिण सुं सामायक मझे, मुनि प्रति द्रव्य वहिराय ।४९।
द्रव्य अनेरा नो हुवै, ते मुनि प्रति जो देह ।
तो तेहनी आज्ञा थकी, वहिरावै गुन गेह ॥५०॥
पिण ममत्व भाव पच्चख्यो नहीं, तिण सुं तसु द्रव्य जोय
वहिरायां आज्ञा तणो, कारण नहिं छे कोय ॥५१॥
तिण ज उद्देशे पूछियो, रही सामायक मांहि ।
कोई पुरुष सेवै तदा, तसु भार्या प्रति आय ॥५२॥
हे प्रभु ते श्रावक तणी, भार्या प्रति सेविह ।
तथा अभार्या प्रति तदा, सेवै इम पूछिह ॥५३॥
जिन कहै ते श्रावक तणी, भार्या प्रति सेवन्त ।
अभार्या प्रति सेवै नहीं, वलि गौतम पूछन्त ॥५४॥
हे प्रभु सामायक विषे, भार्या अभार्या होय ।
जिन कहै हन्ता गोयमा, भार्या अभार्या जोय ॥५५॥
किण अर्थे प्रभु इम कह्युं, भार्या प्रति सेवन्त ।
अभार्या प्रति सेवै नहीं, तब भाषे भगवन्त ॥५६॥
जिन कहै सामायक विषे, इसी भावना भाय ।
माता नहिं छे मांहरी, पिता न म्हांरो ताहि ॥५७॥
भ्राता ते म्हांरो नहीं, भगिनी मांहरी नांहि ।
भार्या मांहरी को नहीं, सुत म्हांरो नहिं ताहि ॥५८॥

॥ अथ बावीसमूं श्रावक ने दियां स्यूं थाय अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै श्रावक भणी, अशणादिक आपेह।
तेहने स्यूं फल सपजे, हिव तसु उत्तर लेह ॥ १ ॥
द्वितीय सुयगडांगे कह्यो, द्वितीय अध्ययन विषेह।
अथवा प्रथम उपङ्ग मे, प्रश्न बीस मे लेह ॥ २ ॥
खाणो ने फुन पीवणो, श्रावक तणो सु जोय।
अव्रत मांहि आखियो, वलि गहणो अवलोय ॥ ३ ॥
त्याग त्याग सहु व्रत है, राख्यो जे आगार।
तेहने अव्रत आखिये, बारूं न्याय विचार ॥ ४ ॥
दूजो आस्रव दाखियो, अव्रत ने जिनराय।
ठाणांगठाणे पांचमें, वलि समवायाङ्ग मांहि ॥ ५ ॥
भाव शस्त्र अव्रत भणी, भाख्यो श्री जगभाण।
शङ्का हुवे तो देखल्यो, ठाणांग दशमें ठाण ॥ ६ ॥
तिण सूँ हिये विचारिये, श्रावक ने अवलोय।
अव्रत सेवायां छतां, धर्म पुण्य किम होय ॥ ७ ॥
श्रावक ने विरते करी, देव वैमानिक थाय।
कह्यं भगवती प्रथम शत, अष्टमोद्देशक मांहि ॥ ८ ॥

शस्त्र जे षट्काय नो, अधिकरण कहिवाय।
तसु तीखो कीधां छतां, धर्म पुण्य किम थाय ॥६९॥
इमहिज पड़िमा ने विषै, श्रावक आतम जाण।
अधिकरण न्याये करी, वारूं करो विनाण ॥७०॥
सामायक में आतमा, तसु अधिकरण आख्यात।
तो जे सामायक विना, तेह तणी सी वात ॥७१॥
षट् पोसा इक मास में, अष्ट पोहरिया करेह।
इया बोहित्तर वर्ष में, संवत्सरि इक लेह ॥७२॥
एह तिहोत्तर दिन तणो, व्याज तसु घर आय।
वलि तोटादि नफा तणो, तेहिज धणी कहाय ॥७३॥
घर पुत्रादिक जन्मियां, हर्ष हिये तसु आय।
चित्त उदास हुवे मूंआ, पेज्ज बंधन इम थाय ॥७४॥
तोटो सुण विलखो हुवे, नफो सुणी विकसाय।
सामायक पोषह मझे, ममत्व भाव इणन्याय ॥७५॥
इमहिज पड़िमा रे विषै, हर्ष सोग चित्त आय।
पेज्ज बंधन आख्यो प्रभु, न्यातीला सूं ताय ॥७६॥
एक लखपती शेठ जसु, मात पिता परिवार।
स्त्री पुत्रादिक को नहीं, एकलड़ो अवधार ॥७७॥
लाख रुपइया रोकड़ा, मित्र भणी ज भलाय।
श्रावक नी पडिमा वहे, एकादश लग ताहि ॥७८॥

गौतम प्रति सथार मे, आनन्द आख्यो एम।
हे भदन्त! हूं गृहस्थ छूं, गृहि मज्झ वसूं ज तेम ॥१९॥
ते गृही मज्झ वसता भयो, इतरो अवधि उप्पन्न।
पूर्व दिशि लवणो दधी, जोयण पञ्च सयजन्न ॥२०॥
देखूं ते हूं खेत्र प्रति, दक्षिण पश्चिम एम।
वलि उत्तर दिशि ने विषे, चूल हेमवन्त तेम ॥२१॥
ऊंचो सौधर्म कल्प लग अधो नरक धुर तास।
सहस्र चौरासी वर्ष स्थिति, लोलुच नरकावास ॥२२॥
गौतम बोल्या ए वडो, मोटो अवधि उदार।
ग्रहस्थ भयो नहीं ऊपजे, हे आनन्द विचार ॥२३॥
ते माटे तूं एहनो, लै आलोवण सार।
जाव प्रायश्चित एहनो, पडिवज्जिये धर प्यार ॥२४॥
तब आनन्द पूछ्यो भदन्त, जे वर सत्य वदेह।
आवे छे दण्ड तेह ने, श्री जिन वयण विषेह ॥२५॥
गौतम कहे नहिं दण्ड तसु, वलि आनन्द कहे वाय।
सत्य प्रवर वच कहे तसु, प्रायश्चित जो नांय ॥२६॥
तो तुम्ह हिज आलोवणा, जाव प्रायश्चित लेह।
इत्यादिक इधकार छे, देखोजी चित्त देह ॥२७॥
इम सप्तम अङ्गे कह्यो, आणण मे सुविशेष।
आनन्द भाख्युं ग्रहस्थ हूं, तो पडिमा नो स्यूं पेख ॥२८॥

पड़िमा में पिण पच्चखू, देश व्रत गुणठाण।
जे जे तसु आगार छै, ते ते अव्रत जाण ॥८९॥
खाणो पीणो तेहनो, अविरत मांहो जोय।
तसु अव्रत सेवावियां, धर्म पुण्य किम होय ॥९०॥
पड़िमाधारी आहार ले, तेहने तो कहै पाप।
तो देवै तसु धर्म किम, देखो थिर चित्त थाप ॥९१॥
जो लेण वाला ने पाप छै, पाप लगायो जास।
धर्म पुण्य किण विध हुवे, जोवो हिय विमास ॥९२॥
लेण वाला ने जे हुवे, देण वाला ने तेह।
जिन आज्ञा नहिं बिहुं भणी, बिहुं ने अव्रत बधेह ॥९३॥
जे पड़िमाधारी बिना, अन्य तणो पिण देख।
खाणो पीणो पहिरणो, अविरत में सम्पेख ॥९४॥
ते माटे मुनि दे न तसु, दीधां पावे दण्ड।
अनुमोद्यां पिण दण्ड है, सूत्र निशीथ सुमंड ॥९५॥
श्रावक जिमावण तणी, जिन आज्ञा दे नांहि।
आज्ञा बिन नहिं धर्म पुण्य, देखोजी दिल मांहि ॥९६॥
समदृष्टि श्रधे समो, जिन आज्ञा में धर्म।
आज्ञा बारे धर्म नहीं, ए जिन शासन मर्म ॥९७॥
कहि कहि रे कितरो कहूं, धर्म न आज्ञा बार।
आज्ञा मांहीं पाप नहीं, श्रध्यां सम्यक्त्व सार ॥९८॥

प्रभु कहै करे गवेषणा, निज भंड तणीज तेह।
पिण जे पर ना धन तणी, गवेषणा न करेह ॥३९॥
वलि गौतम पूछ्यो प्रभु, सामायिक रै मांहि।
ते भंड ने वोसिराविया, भंड अभंड कहाहि ॥४०॥
जिन कहै हन्ता गोयमा, भंड अभंड कहाय।
वलि गौतम पूछ्यो प्रभु, तसु भंड कहो किणन्याय ॥४१॥
प्रभु कहै सामायक विषे, ते इसी भावना भाय।
हिरण्य नहीं ए मांहरो, वलि मुझ सुवर्ण नाहिं ॥४२॥
कांसी नहीं ए मांहरो, नहीं वस्त्र मुझ एह।
नहिं मांहरो विस्तीर्ण धन, कनक रत्न मणि जेह ॥४३॥
मोती ने वलि शङ्ख शिल, प्रवाल भूंग कहाय।
पद्म रत्न आदिक छतां, सार द्रव्य मुझ नांहि ॥४४॥
एहवी चिन्तवना प्रवर, सामायक में जान।
पिण ममत्व भाव जे धन थकी, न कियो तिण पच्चखाण ।४५।
तिण अर्थे इम आखियो, निज भंड लणीज जेह।
गवेषणा पिण पर तणा, भंड नी नथी करेह ॥४६॥
प्रगट पाठ में इम कह्यो, ते माटै अवलोय।
सामायक में धन थकी, ममत्व भाव तसु जोय ॥४७॥
ममत्व भाव पचख्यो नथी, रही सामायक मांहि।
तो पड़िमा में धन तणी, ममत्व तजी किम ताहि ।४८।

सावद्य पाप सहित जे, सावद्य कहिये तास ।
अन्तर आंख उघाड़ ने, वारूं न्याय विमास ॥ ८ ॥
निशीथ उद्देशे बारमें, मुनि अनुकम्पा आण ।
तृणादिक पाशे करी, जो बांधे त्रस प्राण ॥ ९ ॥
अथवां बांधतां प्रते, जो अनुमोदे ताय ।
चौमासी तसु प्रायश्चित, प्रगट पाठ में वाय ॥१०॥
इमहिज बन्ध्या जीव ने, छोडे तो दण्ड पाय ।
छोड़ता प्रति जे वली, अनुमोद्यां दण्ड आय ॥११॥
ए प्रत्यक्ष पाठ विषे कह्यो, अनुकम्पा ए जान ।
सावद्य छै तिण कारणे, दंड कह्यो भगवान ॥१२॥
छोडे तसु अनुमोदियां, तृतीय करण दंड ख्यात ।
तो छोडे ते धुर करण, तास धर्म किम थात ॥१३॥
असंजती रो जीवणो, बंछै नहिं मुनिराय ।
मरणो पिण नहिं बञ्छणो, ए राग द्वेष कहिवाय ॥१४॥
असंजती रो जीवणो, बञ्छ्यां धर्म जु होय ।
तो ए अनुकम्पा तणो, प्रायश्चित किम जोय ॥१५॥
सावद्य ए अनुकम्प छै, तिण सुं दंड छै तास ।
निर्वद्य नो दंड हुवे नहीं, जोवो हिये विमास ॥१६॥
अनुकम्पा नें अर्थ ही, कृष्ण ईंट उपाड़ ।
मूंकी वृद्ध तणे घरे, अन्तगडे अधिकार ॥१७॥

नहिं छै म्हांरी पुत्रिका, सुत नो बह्न विमास।
ते पिण मांहरो को नहीं, करै इम चिन्तवणा तास ॥५९॥
प्रेम रूप बन्धन वलि, तसु विच्छिन्न न हुन्त।
तिण अर्थे करि तेहनी, भार्या प्रति सेवन्त ॥६०॥
इह विध प्रभुजी आखियो, सामायक रे मांहि।
प्रेम बन्धन छेद्यो नथी, मात प्रमुख नूं ताहि ॥६१॥
इमहिज पड़िमा ने विषे, मात प्रमुख नूं सोय।
प्रेम बंधन तूटो नथी, न्याय विचारी जोय ॥६२॥
इग्यारमी पड़िमा मझै, न्यातीला नो धार।
प्रेम बंधन छूटो नथी, तिण सुं ले तसु आहार ॥६३॥
कह्यूं दशाश्रुतस्कन्ध इम, ते माटे अवलोय।
पेज्ज बंधन खाते तसु, आहार लेवूं पिण होय ॥६४॥
पूछ्यां जिन आज्ञा न दे, लेण वाला ने जोय।
देण वाला ने पिण नही, जिन आज्ञा अवलोय ॥६५॥
जिन आज्ञा बारे नहीं, धर्म पुण्य ,रो अंश।
धर्म कहे आज्ञा विना, तसु कहिये मति भ्रंश ॥६६॥
सूत्र भगवती ने विषे, सप्तम सतकै भेव।
प्रथम उद्देशा ने विषे, दाख्यो श्री जिनदेव ॥६७॥
सामायक मांहे कही, श्रावक नो सपेख।
आत्म ते अधिकरण इम, प्रगट पाठ में लेख ॥६८॥

छेद्र करी जल आवतो, देखी ग्रहस्थ प्रतेह।
बतावणो नहिं जिन कह्यो, प्रत्यक्ष पाठ विषेह ॥२८॥
उदक भराती नाव ए, देवूं तुरत बताय।
एहवुं पिण नवि चिन्तवे, मन माहीं मुनिराय ॥२९॥
आप अने बहु अन्य जन, डूबे उदक करेह।
सम भावे बैठो रहै, राग द्वेष टालेह ॥३०॥
द्वितीय अङ्ग में आखियो, श्रुतखंध द्वितीय विषेह।
पञ्चम अध्ययने प्रगट, तीसमी गाथा जेह ॥३१॥
जीव सिंह व्याघ्रादि फुन, हिन्सक देखी सन्त।
यह मारवा जोग छै, इम न कहै गुणवन्त ॥३२॥
अथवा हिंसक देख ने, यह हणवा जोग ज नाहिं।
एहवुं पिण कहिवुं नहीं, निपुण विचारो न्याय ॥३३॥
वृत्तिकार एहवुं कह्युं, वधवा जोग ज नाहिं।
इम कहतां तसु कर्म नी, अनुमोदना जु आय ॥३४॥
कह्या सिंह बाघ्रादि जी, आदि शब्द रै मांहि।
घातक जे षट्काय ना, ते सहु आव्या ताहि ॥३५॥
हणै कसाई अज भणी, तसु तारण अणगार।
त्याग करावे वध तणा, दे उपदेश उदार ॥३६॥
पिण बकरा नुं जीवणो, बंछै नहिं मन मांहि।
असंजम जीवत बंछयो, बर्ज्यों छै जिनराय ॥३७॥

सिव तणे व्रत पच्चमे, निज पोता ना जाण।
सहस्र दाम उपरन्त सूं, राखण रा पच्चखाण ॥७९॥
पड़िमाधारी ना जिके, लाख दाम राखन्त।
तेह तणो अव्रत तणो, अघ किण ने लागन्त ॥८०॥
तथा रुपइया लाख जे, किण रा परिग्रह मांहि।
पोते रखवाली करै, पिण तसु परिग्रह नांहि ॥८१॥
पड़िमाधारी ना प्रगट, परिग्रह मांहि पिछाण।
अविरत नो लागे तसु, पाप निरन्तर जाण ॥८२॥
ममत्व भाव पच्चख्यो नथी, पड़िमा से कुण न्याय।
सामायक जिम तेहनु, तनु अधिकरण कहाय ॥८३॥
तथा लखपती श्रेठ इक, पुत्रादिक नहिं कोय।
गुमास्ता बहु तेहने, विणज करे अवलोय ॥८४॥
दुकान वाणोत्तर भणी, श्रेठ भलावी सोय।
श्रावक नी पड़िमा वहे, एकादश लग जोय ॥८५॥
व्याज आवे रुपइया तणो, ते किण रा घर मांहि।
वलि तोटा नफा तणो, कांवण धणी कहिवाय ॥८६॥
पड़िमाधारी ना प्रगट, घर से आवे व्याज।
नफा अने तोटा तणो, एहिज धणी समाज ॥८७॥
लाख तणा बे लाख थया, परिग्रह कुण रो हीज।
सहस्र पचास रह्या छतां, तोटो तास कहीज ॥८८॥

मात बचावा ऊठियो, भागो पोषह ताहि।
तो साधु बचावे तेहनुं. चारित्र भागे किम नांहि ॥४८॥
जे कार्य्य कीधे छते, पोषह चारित्र भागेह।
ते कार्य्य में धर्म किम, न्याय विचारो लेह ॥४९॥
द्वितीय सुयगडाङ्ग पवर, छट्ठा अध्ययन रे मांहि।
अठारमी गाथा अमल, आद्र मुनि कहिवाय ॥५०॥
निज कर्म प्रते खपायवा, वा अन्य तारण ताहि।
धर्म देशना प्रभु दिये, निमल विचारो न्याय ॥५१॥
असंजती जे जीव छै, तास बचावा हेत।
वीर प्रभू उपदेश दे, इम नवि भाख्यो तेथ ॥५२॥
द्वितीय आचाराङ्ग ने विषे, द्वितीय अध्ययने ताहि।
प्रथम उद्देशे प्रभु कह्यो, ग्रहस्त लड़े मांहोमांहि ॥५३॥
देखी नवी चिन्ते मुनि, मारो एह प्रतेह।
अथवा दूख मे मत हणो, राग द्वेष वर्जेह ॥५४॥
द्वितीय आचारङ्ग ने विषे, द्वितीय अध्ययन विषेह।
प्रथम उद्देशे ग्रहस्थ वे, तेज आरम्भ करेह ॥५५॥
देखी मन चिन्ते न मुनि, अग्नि उजालो एह।
अथवा अग्नि उजाल मति, इम पिण नवि चिन्तेह ॥५६॥
तथा बुझावो अग्नि ए, अथवा मत बुझाव।
एहवुं पिण नवि चिन्तवे, राखे मुनि सम भाव ॥५७॥

इम सांभल उत्तम नरां, राखो जिन सु प्रतीत।
आज्ञा बारे धर्म नही, कारबी नही अनीत ॥६६॥

॥ इति श्रावक ने दियां स्यूं अधिकार ॥

॥ अथ तेवीसमूं अनुकम्पा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै असंजती भणी, जीव बचावे जाण।
स्युं फल तास समुपजै, तसु उत्तर पहिछाण ॥ १ ॥
जीव छोडावे दाम दे, जिन मुनि नहिं दें आण।
अनुमोदै पिण नहिं तिके, सावद्यरा पच्चखाण ॥ २ ॥
मुनि दीक्षा लीधी तदा, सर्व सावद्य पच्चखेय।
जीव छोडावे नहिं तिके, निज वस्त्रादिक देय ॥ ३ ॥
ग्रहस्थ छोडावे दाम दे, जो मुनि अनुमोदेह।
तृतीय करण भागे तसु, पाप कर्म बंधेह ॥ ४ ॥
तृतीय करण अनुमोदवे, लागे पाप अबून।
तो दाम दिये ते धुर करण, कीम हुवे तसु पुण्य ॥ ५ ॥
सामायक पोषह विषे, सावद्य प्रति पच्चखेह।
जीव छोडावे नहिं तिके, निज वस्त्रादिक देह ॥ ६ ॥
खोटी सावद्य जाण कै, जे त्यागी मुनिराय।
ग्रहस्थ ते सावद्य कियां, धर्म पुण्य किम थाय ॥७॥

निशीथ उद्देशे ग्यारमें, पर नै भय उपजाय ।
डरावता प्रति अनुमोदै, दण्ड चौमासी आय ॥६८॥
ग्रहस्थ नी रक्षा करै, रक्षा करि प्रतेह ।
अनुमोद्यां पिण दण्ड कह्यो, निशीथ तेरमें लेह ॥६९॥
दशवैकालिक तीसरै, ग्रहस्थ तणी मुनिराय ।
साता पूछ्यां सोलमो, अणाचार कह्यो ताय ॥७०॥
ग्रहस्थ नी व्यावच कियां, आठ वीसमूं न्हाल ।
अणाचार मुनिवर भणी, दाख्यो परम कृपाल ॥७१॥
करै करावै जे नथी, करता प्रते अवलोय ।
मुनि अनुमोदै पिण नहीं, तो धर्म कहै किम सोय ॥७२॥
अशणादिक ग्रहस्थी भणी, दियां मुनि नै दण्ड ।
अनुमोद्यां पिण दण्ड कह्युं, निशीथ पनरमें मंड ॥७३॥
शस्त्र है षटकाय नूं, ग्रहस्थ तणो जे शरीर ।
तसु तीखो करवा तणी, किम आज्ञा दे वीर ॥७४॥
घातिक जे षट काय ना, तास बचावै कोय ।
तसु प्रते आज्ञा किम दिये, न्याय विचारी जोय ॥७५॥

॥ हिव साधू री आज्ञा बाहर री ग्रहस्थ व्यावच
करै तसु उत्तर ॥

कोई कहै साधू तणी, व्यावच ग्रहस्थ करेह ।
तेह विषे स्यूं फल हुवे, तसु उत्तर हिव लेह ॥७६॥

राणी धारणी गर्भ नी, अनुकम्पा मै अर्थ।
पथ्य अनादिक भोगव्या, ज्ञाता मांहि तदर्थ ॥१८॥
सुलसां नी अनुकम्प करि, देवकी ना सुत आणि।
सूंक्या हरण गवेषी सुर, अन्तगड में जाण ॥१९॥
अभय कुमार तणी वली, अनुकम्पा चित्त आणि।
दोहलो पूर्यो मित्र सुर, ज्ञाता मे जिन वाणि ॥२०॥
रत्तन द्वीप देवी तणी, जिन ऋषि करुणा कीध।
ज्ञाता नवम अध्येन कह्यूं, सावद्य यह प्रसिद्ध ॥२१॥
इत्यादिक अनुकम्प नी, जिन आज्ञा दे नाहिं।
ते माटै सावद्य तिके, देखोजी दिल मांहिं ॥२२॥
जीव हणै मुज कारणै, चिन्तव नेम कुमार।
तोरण थी पाछा फिर्या, ए अनुकम्पा सार ॥२३॥
जीव हणन्ता नेम ना, विवाह निमत्त पिछाण।
ते टाल्यो पाप पोता तणो, जिन आज्ञा तिहां जाण ।२४।
गज भव सुसलो नवि हण्यो, कष्ट भोगव्यो आप।
निर्वद्य ए अनुकम्प छै, गज टाल्यो निज पाप ॥२५॥
उत्तराध्ययन इकवीस में, चोर देख समुद्रपाल।
छोड़ायो आख्यु नथी, चरण लियो सुविशाल ॥२६॥
दूजो श्रुतस्कन्ध अङ्ग धुर, तृतीय अध्ययन विचार।
प्रथम उद्देश कह्यो मुनि, बैठो नाव मझार ॥२७॥

पेटूची अति दुःख रे, दूठो भूती सम कही।
गृही मसलै कर सुक्ख रे, तेहने पिण तसु लेख पुण्य।८५।

अटवी विषे अचेत रे, हय खर सगट वैसाण ने।
आणे गृही पुर तेथ रे, तेहने पिण पुण्य तसु मतै।८६।

मुनि थाको मग मांहि रे. बोझ घणो पोथ्यां तणो।
पगभर खिस्यो न जाय रे, ते बोझ उठायां पिण धर्म।८७।

अरण्य वलि पुर मांहि रे, सन्त तृषातुर चेत नहीं।
सचित उदक गृही पाय रे, तेह ने लेखै धर्म तसू।८८।

इत्यादिक अवलोय रे, गृही मुनि ना कार्य करै।
हरस छेद्यां धर्म होय रे, तसु लेखै सहु में धर्म॥८९॥

मुनि नी हरस छेदन्त रे, तेहने अनुमोदै मुनि।
दण्ड चौमासो हुन्त रे, तृतीय उद्देश निशीथ में॥९०॥

अनुमोद्यां ही पाप रे, तो गृही छेद्यां पुण्य किम।
जिन आज्ञा चित्त स्थाप रे, आज्ञा विन नहीं धर्म पुण्य

सामायक पच्चखाण रे, निर्वद्य कार्य अन्य वलि।
ग्रहस्थ करै जो जाण रे. तो मुनि अनुमोदै तसु॥९२॥

निर्वद्य कार्य ताहि रे, गृही कीधे धर्म पुण्य तसु।
अनुमोदै मुनिराय रे, तेहने पिण धर्म पुण्य छै॥९३॥

विणज अने व्यापार रे, सावद्य कार्य अन्य वलि।
ग्रहस्थ करै तिंवार रे, धर्म पुण्य तेह ने नथी॥९४॥

दशमें अध्ययन द्वितीय अङ्ग, च्यार बीसमी गाह।
जीवित मरण न बंछणो, असंजम जीवित ताह ॥३८॥
तेरमें ध्ययने द्वितीय अङ्ग, तीन बीसमी गाह।
जीवन मरण न बंछणो, असंजम जीवित ताह ॥३९॥
पनरम अध्ययने द्वितीय अङ्ग, दशमी गाथा मांहि।
असंजम जीवित प्रते, मुनि आदर न दिये ताहि ॥४०॥
तृतीय अध्ययने द्वितीय अङ्ग, तूर्य उद्देश विषेह।
जीवित मरण न बंछणो, असंजम जीवित तेह ॥४१॥
इत्यादिक बहु स्थान में, असंजम जीवत ताय।
बाल मरण नहिं बंछणो, भाख्यो श्री जिनराय ॥४२॥
आप तणो नहिं बञ्छनो, असंजम जीवित सोय।
तो पर नुं बंछ्या थकां, धर्म पुण्य किम होय ॥४३॥
बाल मरण पिण आपरो, बंछे नहिं मुनिराय।
पर नूं पिण बञ्छे नहीं, बञ्छ्यां धर्म न थाय ॥४४॥
पण्डित मरण ज आप रो, बञ्छे महा मुनिराय।
पर नूँ पिण बञ्छे तिको, विमल विचारो न्याय ॥४५॥
कह्यो सातमा अङ्ग में, पोषह विषे पिछाण।
मात बचावण ऊठियो, चूलणीपिया जाण ॥४६॥
अमा तसु इम आखियो, भागो पोषह सोय।
वलि व्रत भागो कह्यो, भागो नियम सु जोय ॥४७॥

किण ही ग्रहस्थ पच्चखाण रे, हरस छेदावा ना किया।
जबरी सूं पहिछाण रे, वैद्य हरस छेदै तसु ॥१०५॥
नेम भङ्ग तसु नाहिं रे, पिण त्याग भङ्ग करवा तणो।
कामी वैद्य कहिवाय रे, तिण सुं धर्म न तेहने ॥१०६॥
तिम मुनि रै पच्चखाण रे, हरस छेदावा गृही कनै।
जबरी सूं पहिछाण रे, वैद्य हरस छेदै तसु ॥१०७॥
नियम भङ्ग तसु नाहिं रे, पिण त्याग भङ्ग करवा तणो।
कामी वैद्य कहाय रे, तिण सुं नहिं तसु धर्म पुराय ॥१०८॥
वैद्य हरस छेदेह रे, अनुमोदै नहिं जो मुनि।
किम तसु धर्म कहेह रे, न्याय विचारी देखल्यो ॥१०९॥
अनुमोद्यां ही पाप रे. तो छेदै तसु पुराय किम।
तृतीय करण अघ स्थाप रे, प्रथम करण तो अधिक अघ
पाप हुवे धुर करण रे, ते अघनो अनुमोदना।
तीजे करण उच्चरण रे, तिण लेखे तसु पाप है ॥१११॥
प्रथम करण पुराय होय रे, ते पुराय नी करणी प्रते।
अनुमोदै जो कोय रे, तास पाप किण विध हुवे ॥११२॥
करण वाला ने पुराय रे, ते अनुमोद्यां पाप कहै।
प्रत्यक्ष वचन जबुन्य रे, न्याय दृष्टि करि देखिये ॥११३॥
छेदे तिण ने पुराय रे, ते पुराय री करणी प्रते।
अनुमोद्यां जो पुराय रे, तास पाप किण विध हुवे ॥११४॥

नवम: उत्तराध्ययने कह्यु, मिथिला बलती देख।
साहमूँ नवि जोयो नमी, टाल्यो राग विशेष ॥५८॥
दशवैकालिक सातवें, पचासमी जे गाह।
माहोमांही सुर भिडै, इम मनु माहोमांहि ॥५९॥
तिर्यञ्च माहोमांहि लड़े, एहनी थावो जीत।
दूसरी जय थावो मती, मुनि न कहै ए रीत ॥६०॥
दशवैकालिक सातवें, इक्कावनमी गाह।
वर्षा ने फुन बायरो, सीत उष्ण अधिकाह ॥६१॥
राज विरोध रहित फुन, थावो देश सुगाल।
उपद्रव रहित हुवो वली, इम न कहै मुनि माल ॥६२॥
ए सातों होवो तथा, ए सातों मत होय।
ए विध पिण न कहै कदा, अमल न्याय अवलोय ॥६३॥
दिशा मुढ जे ग्रहस्थ ने, मार्ग बतायां दण्ड।
निशीथ उद्देशै तेरमे, चौमासिक प्रचण्ड ॥६४॥
ठाणा अङ्ग ठाणें तीसरे, तृतीय उद्देशक मांय।
आत्म रक्षक तीन जे, आख्या श्री जिनराय ॥६५॥
हिन्सादिक देखी करी, दिये धर्म उपदेश।
अथवा मौन रहै मुनि, समभावे सुविशेष ॥६६॥
अथवा उठी त्यां थकी, एकान्त जागां जाय।
आत्म रक्षक ए कह्या, पिण छोडावणो कह्यो नांय ॥६७॥

धर्म पुण्य नहिं होय रे, ते सघला बोलां मझै।
तो पाप गृही ने जोय रे, जिन आज्ञा नहिं ते भणी १२५
तिम ते हरस छेदन्त रे, अशुभ क्रिया ते वैद्य ने।
मुनि नहिं अनुमोदन्त रे, धर्म पुण्य किण विध हुवे १२६
हरस छेद्यां शुभ कर्म रे, तो आचारंग में कह्या।
त्यां सघला में धर्म रे, कहवो तिण रै लेख ए ॥१२७॥
धर्म नहिं अन्य मांहि रे, तो छेदै ब्रणादि गृही।
तिण में पिण पुण्य नांहि रे, ए सावद्य आज्ञा नथी १२८
हरस छेद्यां धर्म हुन्त रे, तो मुनि शिर सेती गृही।
जूंवा पिण काढंत रे, तिण में पिण तसु लेख पुण्य ॥१२९॥
वलि मुनिवर नो सोय रे, पग चम्पी मर्द्दन करै।
करै जो औषध कोय रे, तसु लेखै पुण्य सहु मझै ॥१३॥
वृत्ति विषे इम वाय रे, धर्म बुद्धि छेद्यां थकां।
क्रिया हुवे शुभ ताय रे, अशुभ क्रिया लोभादि करि।१३१।
विरुद्ध अर्थ छे एह रे, सूत्र थकी मिलतो नथी।
मुनि नहीं अनुमोदेह रे, तास क्रिया शुभ किम हुवे।१३२।
इम शुभ क्रिया जो होय रे, तो औषध तेलादि करि।
मुनि तनु मर्द्दै कोय रे, तास क्रिया पिण शुभ हुवे ॥१३३॥
वलि मुनि पग थी ताय रे, खीलो कांटो काढियां।
तसु लेखे कढिवाय रे, तेहनै पिण हुवे शुभ क्रिया ॥१३४॥

जे व्यावच मुनि नी करै, तसु आज्ञा प्रभु देह।
निरदोषण अशणादि कर, तेह विषे धर्म लेह ॥७७॥
जे व्यावच मुनि नी करै, प्रभु आज्ञा नहिं देह।
तेह विषे नहिं धर्म पुण्य. न्याय विचारी लेह ॥७८॥

॥ साधू री हरस छेद्यां पुण्य शुभ क्रिया कहै तेहनुं उत्तर ॥

सोलम शतके भगवती, तृतीय उद्देश विमास।
हरस छेदै जे मुनि तणो, क्रिया कही प्रभु तास ॥७९॥
हरस छेदूं हूं तुम तणो, इम पूछ्यां अणगार।
आज्ञा न दिये गृही भणी, तिण सुं आज्ञा बार ॥८०॥
कार्य करावे नहि मुनी, ग्रहस्थ कने जे अंश।
जबरी सूं जो को करै, तो न करै तास प्रशंस ॥८१॥

॥ सोरठा ॥

ग्रहस्थ मुनि नी पेख रे; हरस छेद्यै धर्म पुण्य।
तो मुनि ना कार्य अनेक रे, तसु लेखै कीधां धर्म ॥८२॥
मुनि पग कांटो जाण रे, वलि फांटो चक्षू थकी।
गृही काढे विण आण रे, तसु लेखै धर्म गृही भणी ॥८३॥
दूखै पेट अपार रे, मुनि चित व्याकुल दुःख घणो।
गृही मसलै कर सार रे, तेहने पिण पुण्य लेख तसु ॥८४॥

दूखे पेट मुनी तणो, मौत घात अवलोय।
बाई मसले उदरतो, तसु लेखे धर्म होय॥ ३॥
वलि किण ही साधू तणो, टलो पेटूची ताम।
बहु दुःख फेरोपी घणो, अन्न नहिं भावे आम॥ ४॥
ते पेटूची मुनि तणी, बाई मसले कोय।
तो उथारे लेखें तदा, तिण में पिण धर्म होय॥ ५॥
किण ही मुनि रो गोलो चढ्यो, बहु दुःख बाई देख।
गोलो मसले तेहनूं, धर्म हुई तसु लेख॥ ६॥
अग्नि विषे पड़ता प्रते, बाई बांह पकड़ेह।
बारे काडे तेहने, तो धर्म तसु लेखेह॥ ७॥
ऊंचा थी पड़तो मुनि, बाई झेले तास।
तिण मांही पिण धर्म छे, तेहने लेख विमास॥ ८॥
आखड़ पडतां मुनि भणी, बाई झाल राखेह।
पड़ता ने बेठो करे, हुवे धर्म तसु लेखेह॥ ९॥
माथो दूखे मुनि तणो, बाई शिर दाबेह।
मलम लगावे दूखणे, तसु पिण धर्म कहेह॥१०॥
पाटो बांधे दूखणे, मुच्छी फुन मसलेह।
इत्यादिक बहु मुनि तणा, बाई कार्य्यं करेह॥११॥
दुःखी देख साधू भणी, मरतो देखी ताय।
पीडाणो देखी करी, साता करे सवाय॥१२॥

सावद्य कार्य ताहि रे, गृही कीधे पिण पाप छै।
अनुमोदे मुनिराय रे, प्रायश्चित आवे तसु ॥९५॥
हरस छेदण री ताहि रे, आज्ञा जिन मुनि न दियै।
अनुमोदे पिण नांहि रे, तिण सु ते सावद्य अछै ॥९६॥
ग्रहस्थ पासे जाण रे, कार्य करावा मुनि तणैं।
जावज्जीव पच्चखाण रे, मर्यान्ते पिण नियम ए ॥९७॥
हरस गुम्बडा आदि रे, गृही पै छेदावण तणा।
मुनि ने त्याग संवाद रे, गृही छेदे जबरी थकी ॥९८॥
मुनि अनुमोदे नांहि रे. तो तसु त्याग भागे नहीं।
पिण कामी कहिवाय रे, त्याग भगावानो गृही ॥९९॥
तिण सु सावद्य एह रे, वलि अनुमोदे पिण नहीं।
आज्ञा पिण नहिं देय रे, ते माटे नहिं धर्म पुण्य ॥१००॥
जे कामी गृही थाय रे. त्याग भगावा मुनि तणो।
धर्म नहिं तिण मांहि रे. न्याय दृष्टि अवलोकिये ॥१०१॥
किण गृही अट्ठम कीध रे, आहार च्यार त्यागन किया।
व्याकुल तृषा प्रसिद्ध रे, थयां अचेतन अन्य गृही ॥१०२॥
उसनोदक तसु पाय रे, कियो सचेतन अधिक सुख।
नेम भङ्ग तसु नांय रे. पिण कामी त्याग भांगण तणो ।१०३।
तेम इहां अवलोय रे. नेम भङ्ग मुनि नो नथी।
पिण कामी गृही होय रे, त्याग भगावा मुनि तणो ।१०४।

जो यां सहु बोलां मभे, जिन आज्ञा दे नांहि।
तो धर्म पुण्य पिण को नहीं, धर्म जिन आज्ञा मांहि ॥२३॥
जे मुनिवर ने त्याग छै, ते कार्य्य अवलोय।
ग्रहस्थ करै को मुनि तणा, तास धर्म नहीं होय ॥२४॥
जिण रीते जिणवर कह्यो, तिण रीते अवलोय।
अज्भा ने मुनिवर भणी, वचावियां धर्म होय ॥२५॥
जे प्रभु सीखावे नहीं, न करै तास प्रशंस।
आज्ञा पिण देवे नहीं, तिहां धर्म तणो नहि अंश ॥२६॥

॥ इति सुभद्राधिकार ॥

॥ अथ पच्चीसमूं गोशालाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै छद्मस्थ प्रभु, चौनाणी था जेह।
किम चूका कहो वीर ने, तसु उत्तर हिव लेह ॥ १ ॥
वलि तुम्ह कहो गोशाल ने, दीक्षा दीधी स्वाम।
ते किण सूत्र विषे कह्युं, तसु उत्तर पिण ताम ॥ २ ॥
वलि अनुकम्पा करि प्रभु, राख्यो जे गोशाल।
तेह विषे पिण स्युं थयुं, तसु उत्तर पिण न्हाल ॥ ३ ॥
शतक पनरमें भगवती, आया सावत्थी स्वाम।
उत्पत्ति गोशाला तणी, गौतम पूछी ताम ॥ ४ ॥

धर्म बिना पुण्य नाहिं रे, शुभ जोगां थी निरजरा।
पुण्य बन्ध पिण थाय रे, ज्यूं गहुं लारै खाखलो ।११५।
द्वितीय आचारङ्ग मांय रे. तेरम अध्ययन ने विषे ।
पाठ कह्या जिनराय रे, ग्रहस्थ करै साधु तणा ॥११६॥
मुनि तनु ब्रणज थाय रे, गृही छेदै शस्त्रे करी ।
मुनि मन कर बाञ्छै नांय रे, न करावे बचकाय करि ११७
ब्रण छेदो ने ताहि रे, रुधिर राधि काढे गृही ।
मुनि मनकरि बञ्छै नांहि रे, न करावे बचकाय करि ११८
गृही मुनि पगवलि काय रे, तैल चोपड़े मर्दने ।
मुनि मन कर बञ्छै नांय रे, न करावे बच काय करि ११९
गृही मुनि पग थी ताहि रे, खीलो कांटो काढियां ।
मन करि बञ्छै नांहि रे, न करावै बचकाय करि १२०
मुनि मस्तक थी ताहि रे, गृही काढे जूं लीख प्रते ।
मन करि बञ्छै नांहि रे, न करावे बच काय करि १२१
बोल इत्यादिक ताहि रे, ग्रहस्थ करै साधू तणा ।
बञ्छै नहिं मुनिराय रे, द्वितीय आचारंग तेरमे १२२
मुनि अनुमोदै नांहि रे, तो ग्रहस्थ करै ए ऋषि तणा ।
धर्म पुण्य तिण मांहि रे, किण ही बोल विषे नथी १२३
मुनि तनु ब्रण छेदन्त रे, धर्म कहै इक बोल में ।
तो तसु लेखै इन्त रे, धर्म सर्व बोलां मझै ॥१२४॥

तन्तुवाय शाला विषे, गोशालो तिहवार।
मुझ प्रति तिण देख्यो नहीं, जोयोभ्यन्तर बार ॥१५॥
मुझ अण देख्ये निज उपधि, ब्राह्मण ने दे ताय।
मूंडी दाढ़ी मूंछ प्रति, मिल्यो ज मुझ सूं आय ॥१६॥
तीन प्रदक्षिण दे करी, जाव नमी कहै मुज्झ।
थे धर्माचार्य माहरा, हूं धर्म अन्तेवासी तुज्झ ॥१७॥
तब मैं गोशालक तणां, एह अर्थ प्रति सोय।
अङ्गीकार कीधो तदा, पाठ विषे इम जोय ॥१८॥
वृत्तिकार कह्युं एहवा, अजोग ने पिण जेह।
अङ्गीकार कीधो प्रभु, ते अक्षीण राग पणेह ॥१९॥
वलि तेहना परिचय थकी, ईषत् थोड़ी जाण।
स्नेह गर्भ अनुकम्पना, सद्भावे पहिछाण ॥२०॥
प्रभु छद्मस्थ पणे करि, जेह अनागत काल।
तेह विषे जे दोष ना, अजाणवा थी न्हाल ॥२१॥
अवश्य होणाहार भाव थी, कियो प्रभु अङ्गीकार।
अभय देव सूरे कह्यो, वृत्ति विषे ए सार ॥२२॥

॥ ते टीका कहै छै ॥

अभ्युप गच्छामि यर्थं तस्य अयोगस्याप्यभ्युगमनं भगवत स्तदक्षीण रागतया परिचये नेषत्स्नेह गर्भानुकम्पासद्भावात् छद्मस्थ तयाऽनागत दोषानवगमादऽवश्य' भावीत्वाच्चे तस्यार्थेति भावनीयं।

वलि मुनि शिर थी सोय रे, जूवां लीखां काढिया।
तसु लेखे अवलोय रे, तेहने पिण हुवे शुभ क्रिया ॥१३५॥
मुनि अति तृषा अचेत रे, सचित अचित जल पाय कर।
कीधो गृहस्थ सचेत रे, तसु लेखे हुवे शुभ क्रिया ॥१३६॥
थाको मुनि उजाड़ रे, गाडे हय खर चाढ़ करि।
आणै ग्राम मझार रे, तसु लेखे हुवे शुभ क्रिया ॥१३७॥
इत्यादिक अवलोय रे, मुनि ने जे कल्पै नहीं।
ते करै कार्य्य गृही कोय रे, तसु लेखे पिण शुभ क्रिया।१३८
जो यां बोलां रै मांहि रे, न हुवे गृही ने शुभ क्रिया।
तो हरस छेद्यां पिण ताहि रे, किम शुभ क्रिया कहिजिए॥
हरस छेदण री ताम रे, जिन मुनि आज्ञा नहिं दियै।
जिन आज्ञा विन काम रे, कीधां नहिं छै धर्म पुण्य॥१४०॥

॥ इति अनुकम्पा अधिकार ॥

॥ अथ चौवीसमूं सुभद्राधिकार ॥

॥ दोहा ॥

फांटो काढ्यो आंख थी, सती सुभद्रा जेह।
किणी सूत्र में ए नहीं, कथा विषे छै एह॥ १॥
जो सुभद्रा ने धर्म छै, तो मुनि ना अवलोय।
अन्य कार्य्य वाडूं कियां, तसु लेखे धर्म होय॥ २॥

माटी मूल सहीत तिण, तुरत उपाड़ी जेह।
एकन्ते न्हाख्यो तदा, ते तिल थम्भ प्रतेह ॥३२॥
तत्खिण थोडी वृष्टि करि, थंब्यो तिल थम्भ स्थान।
यथा सप्त तिल फूल चवि, एक फली में आण ॥३३॥
गोशाला साथे तदा, हूं आयो कुर्म ग्राम।
तेहि नगर रे बाहिरे, बाल तपस्वी नाम ॥३४॥
नाम वेसियायिण तिको, तप छट्ठ छट्ठ करेह।
रवि सन्मुख आतापना, तिहां लेतो विचरेह ॥३५॥
तसु शिर थी रवि ताप करि, यूंका भूमि पडन्त।
तास दया अर्थे तिको, वलि २ शिरे धरन्त ॥३६॥
तब गोशालो मुझ पास थी, बाल तपस्वी माहि।
धीरे धीरे आय ने, बोल्यो एहवी वाय ॥३७॥
स्युं तूं मुनि तपस्वी अछे, तथा तत्व नूं जाण।
यती तथा तूं कदा ग्रही, कै जूं सिज्यातर माण ॥३८॥
गोशाला ना वचन ने, तिण आदर नहिं दीध।
मन में भलो न जाणियो, साधी मौन प्रसिद्ध ॥३९॥
बे त्रण वार गोशाल तब, बोल्यो तिमहिज वाण।
स्यूं तूं मुनि तपस्वी अछे, जाव जूंआं रो स्थान ॥४०॥
बाल तपस्वी शीघ्र तब, कोप चढ्यो असराल।
जे आतापन भूमि थी, पाछो वलियो न्हाल ॥४१॥

फांटो काढ्यो सुभद्रा, धर्म हुसी ज्यो तास।
तो यांने पिण धर्म छै, तिण रै लेख विमास ॥१३॥
साधू 'रा कारज करै, बाई जे जिण रीत।
तिम कारज भाई करै, श्रमणी ना धर प्रीत ॥१४॥
जो सुभद्रा ने धर्म छै, तो श्रमणी नो जोय।
भाई फांटो आंख थी, काढ्यां पिण धर्म होय ॥१५॥
वलि कांटो पग मांहि थी, श्रमणी तणोज सोय।
भाई काढे तेह में, तसु लेखे धर्म होय ॥१६॥
वलि गोलो श्रमणी तणो, पेट पेटूची जोय।
भायो मसलै तेह में, तसु लेखे धर्म होय ॥१७॥
शिर दाबे श्रमणी तणूं, भायो तसु दुःख देख।
इम मुच्छी मसलै तसु, धर्म होसी तसु लेख ॥१८॥
मलम लगावे दूखणे, वलि अञ्झा पड़ती जोय।
भायो झेलै तेहने, तसु लेखे धर्म होय ॥१९॥
पड़ती ने बेठी करै, इत्यादिक अवलोय।
श्रमणी ना भायो करै, तसु लेखे धर्म होय ॥२०॥
साधू रा बाई करै, तास धर्म छै सोय।
तो श्रमणी ना भायो कियां, तिण में अघ किम होय ॥२१॥
सुभद्रा फांटो काढियो, जो तिण मे धर्म होय।
तो सारां में धर्म छै, न्याय सरिखो जोय ॥२२॥

॥ दोहा ॥

उष्ण तेजु प्रति संहरी, मुझ प्रति बोल्यो वाय ।
जाएया भगवन् आपने, जाएया २ ताहि ॥५०॥
आप तणा ज प्रसाद थी, दग्ध हुओ नहिं एह ।
संभ्रम थी गत शब्द ने, बार २ उचरेह ॥५१॥

॥ गीतक छन्द ॥

कह्युं वृत्ति में गोशाल नो भगवन्त संरक्षण कियो ।
सराग भावे करि प्रभु इक दया रस थी राखियो ॥
जे उभय मुनि नवि राखस्ये ते वीतराग पणे वृत्ती ।
पुन लब्धि अण फोड़ण थकी वलि अवश्य भावी भाव थी ॥

॥ अत्र टीका ॥

इह च यद्गोशालकस्य संरक्षणं भगवताः कृतं तत्सरागत्वेन दयैकरसत्वाद्भगवतः यच्च सुनक्षत्रसर्वाणुभूति मुनिपुंगवयोर्न करिष्यति तद्वीतरागत्वेन लब्धिनुपजीवकत्वात् अवश्यं भावित्वाद्वे त्यवसेयं ॥इति॥

॥ दोहा ॥

गोशालो तिण अवसरै, मुझ प्रति बोल्यो वाय ।
जं सिध्यातपियो किसूं, तुझ प्रति भाषे ताहि ॥५३॥
जाएया भगवन्त तो भणी, जाएया जाएया सोय ।
तब हूं गोशाला प्रते, इम बोल्यो अवलोय ॥५४॥

वीर कहै सुण गोयमा, गौ नी शाला मांय ।
ए जन्म्यो तिण कारणै, नाम गोशाल कहाय ॥ ५ ॥
हूं तीस वर्ष घर में रह्यो, प्रभु चरण सुख राशि ।
प्रथम वर्ष पख पख सुतप, अट्ठी ग्राम चौमास ॥ ६ ॥
तप मास मास दूजे वर्ष, नगर राजग्रह वार ।
नालंदा पाडा मझै, चौमासो सुविचार ॥ ७ ॥
तन्तुवाय शाला विषे, हूं तप करत विशेष ।
आय रह्यो गोशाल पिण, ते शाला इक देश ॥ ८ ॥
प्रथम मास नूं पारणो, विजय तणै घर कीध ।
प्रगट हुवा जी पञ्च द्रव्य, महिमा देख प्रसिद्ध ॥ ९ ॥
गोशालो कह्यो मुझ भणी, थे धर्माचार्य सोय ।
धर्मान्तेवासी प्रभू, हूं तुम्हनो अवलोय ॥१०॥
तब मैं तेहना वचन ने, आदर न दियो कोय ।
मन मे भलो न जाणियो, धारी मौन सु जोय ॥११॥
द्वितीय मास नो पारणो, अनन्द ने घर कीध ।
तिमहिज गोशाले कह्यो, मैं आदर नही दीध ॥१२॥
तृतीय मास नूं पारणो, कियो सुदर्शण गेह ।
तिमहिज गोशाले कह्यो. मैं आदर नही देह ॥१३॥
तूर्य मास नूं पारणो, कोल्लाक संनिवेश ।
ब्राह्मण बहुल तणे घरे, करि चाल्यो सुविशेष ॥१४॥

॥ दोहा ॥

तिण अवसर गोशाल ते, सांभल बच मुझ पास ।
विहनो यावत् पामियो, अत ही भय मन त्रास ॥६३॥
मुझ प्रति वन्दी नमण करि, इम बोल्यो अवलोय ।
संक्षिप्त विस्तीर्ण प्रभु, तेज लेश किम होय ॥६४॥
तिण अवसर हूं गोयमा, गोशाला प्रति ताहि ।
तेह मंखली पुत्र प्रति, बोल्यो इह विध वाय ॥६५॥
इक मूंठी उडदे करी, फुन जे उण जलेह ।
इक पुशली तप छट छटे, अन्तर रहित करेह ॥६६॥
ऊंची बांह आतापना, सूर्य संनमुख लेह ।
तसु छेहड़े षट् मास रै, तेजु लेश ह्वे तेह ॥६७॥
गोशालक तिण अवसरे, ए मुझ अर्थ प्रतेह ।
सम्यक् प्रकारे विनय करि, अंगीकृत करेह ॥६८॥
तिण अवसर हूं गोयमा, गोशालक संघात ।
अन्य दिवस कुर्म ग्राम जे, नगर थकी विख्यात ॥६९॥
सिद्धार्थ फुन ग्राम जी, नगरे आवत ताम ।
जे तिल थम्भ मुझ पूछियो, झट आव्यो ते ठाम ॥७०॥
तब गोशालो मुझ प्रते, बोल्यो एहवो वाय ।
मुझ ने प्रभु तुम्ह जद कह्युं, तिल निपजसी ताहि ॥७१॥

॥ दोहा ॥

तदन्तर हूं गोयमा, गोशाला रे साथ।
भोगविया षट् वर्ष लग, लाभ अलाभ सञ्जात ॥२३॥
सुख दुःख ने सत्कार फुन, असत्कार फुन सोय।
अनित्य जागरणा जागतो, हूं विचर्यो अवलोय ॥२४॥
मृगशिर मासे एकदा, हूं गोशाला साथ।
जे सिद्धार्थ ग्राम थी, कुर्म ग्राम प्रति जात ॥२५॥
तिल बूंटो इक देख ने, मुझ प्रति तब गोशाल।
ए तिल नीपजसेक नहीं, इम पूछ्यो तिह काल ॥२६॥
सप्त जीव तिल पुष्प ना, मरी २ ने ताय।
किहां उपजसे हे प्रभु! तब हूं बोल्यो वाय ॥२७॥
नीपजसे तिल थम्भ ए, फूल जीव जे सात।
मरी मरी ए एह ने, तिल थम्भ विषे विख्यात ॥२८॥
एक फली जे तिल तणी, तेह विषे अवलोय।
ए तिल सप्त हुस्ये सही, इम मैं भाख्यो सोय ॥२९॥
तब गोशाले मुझ बचन, श्रद्धयो नहिं मन मांहि।
प्रतीतियो पिण नहीं तिणे, रोचवियो पिण नांहिं ॥३०॥
मुझ ने झूठो घालवा, धीरै धीरै तास।
पाछो वल ने आवियो, ते तिल बूंटा पास ॥३१॥

द्रुम निश्चय गोशालका, वनस्पति रै मांहि।
पउट्ट परिहार करै तिके, मरी मरि तसु तन आय ॥८२॥

॥ टीका ॥

पारिवृत्य २ मृत्वा २ यस्तस्यैव वनस्पति शरीरस्य परिहारः परिभोग स्तत्रै वोत्पादो सौ परिवृत्य परिहारस्त।

॥ वार्त्तिका ॥

वनस्पति कहतां वनस्पति ना जीव जे पारिवृत्य २ क० मरी मरी ने एहिज वनस्पति ना शरीर नो परिहार क० परिभोग ते तिहांइज उपजवुं ते पारिवृत्य परिहार कहिइं ते प्रति परिहरति कहतां करै ॥

॥ दोहा ॥

तिण अवसर गोशाल ते, मुझ द्रुम कह्यो छतेह।
एह अर्थं श्रद्धै नहीं, नहीं प्रतीत न रुचेह ॥८३॥
एह अर्थ अण श्रद्धतो, जिहां तिल खम्भ त्यां आय।
ते तिल थम्भ थी तिल तणी, सङ्गली तोड़ै ताहि ॥८४॥
ते तिल संगली तोड़ने, करतल विषे ज सोय।
सप्त तिल पाड़ै तदा, प्रगट पणे सु जोय ॥८५॥
तिण अवसर गोशाल ने, गिणतां ते तिल साल।
एहवुं मन में चिन्तव्युं, जाव समुत्पन्न जात ॥८६॥
द्रुम निश्चय सहु जीव पिण, पउट परिहार करेह।
हे गोतम गोशाल नूं, पउट वाद कह्युं एह ॥८७॥

समुद्घात तेजस प्रते, करै करी अवलोय ।
सात आठ पग ते तदा, पाछो उसरी सोय ॥४२॥
मङ्खलि पुत्र गोशाल ने, हणवा काजे जाण ।
काढे तेज शरीर थी, ए तेजू उष्ण पिछाण ॥४३॥
तिण अवसर हूं गोयमा, गोशालक नी जेह ।
तेह मङ्खली पुत्र नी, अनुकम्पा अर्थेह ॥४४॥
वेसियायण नामे तिको, बाल तपस्वी जेह ।
तेह तणी जे तेज प्रति, दूर हरण अर्थेह ॥४५॥
तापस ने गोशाल रै, दूहां विचाले म्हाल ।
शीतल तेजू लेश्य प्रति, मैं मूंकी तिण काल ॥४६॥

॥ चौपाई ॥

जा मुझ शीतल तेजूलेशं, तिण लेश्या करि ने सुविशेषं । बेसियायण तापस नी जाणी, उन्ही तेजु लेश हणाणी ॥४७॥ बेसियायण तपस्वी तिह अवसर, मुझ शीतल तेजु लेश्या करि । पोता नी जे उष्ण पिछाणी, तेजु लेश्य हणाणी जाणी ॥४८॥ गोशाला ना तनु ने ताह्यो, जाण्यो किञ्चित पीड़ न पायो । देख्युं छवि छेद अण करतो, ते उष्ण तेजु लेश्य संहरतो ॥ ४९ ॥

रे काश्यव तूं इम कहै, मखली सुत गोशाल ।
धर्मान्तिवासी माहरो, पिण हूं नहीं ते न्हाल ॥९६॥
मंखली सुत गोशाल ते, धर्मान्तिवासी तोय ।
ते तो काल करी गयो, सुरलोकिं अवलोय ॥९७॥
महाकल्प चौरासी लक्ष, सप्त देव भव सार ।
सप्त संयूथा सन्नि गर्भ, सत्त पउट परिहार ॥९८॥
इत्यादिक निज शास्त्र नी, वत्तिका कही वणाय ।
जीव उदाई नाम हूं, पिण गोशालो नांय ॥९९॥
गोशाला रै तनु विषै, अम्है कीधूं प्रवेश ।
सप्तम् पौट परिहार ए, इत्यादिक जे अशेष ॥१००॥
चोर तणो दृष्टान्त प्रभु, गोशाला नै दीध ।
तब गोशालो बोलियो, अगल डगल बहु विध ॥१०१॥
श्रवालु भूत्ति मुनि तदा, गोशाला पै आय ।
भगवन्त नै अनुराग करि, बोल्यो एहवी वाय ॥१०२॥
समण; माहण पै एक पिण, आर्य्य वच धारेह ।
तो पिण तसु वन्दै नमै, यावत सेव करेह ॥१०३॥
तो स्यु कहिवो गोशाल तुझ, भगवन्त प्रवर्या दीध ।
निश्चय भगवन्त मूंडियो, शिष्य पणे सुप्रसिद्ध ॥१०४॥
वृत्ति पणै करिनै वली, सेव्यो भगवन्त तोय ।
सीखावी भगवन्त तुझ, तेजु लेश अवलोय ॥१०५॥

हे गोशाला तूं इहां, वेसियायण नामेह।
बाल तपस्वी प्रति तदा, देखी नेत्र करेह ॥ ५५ ॥
धीरे २ ऊसरी, मुझ पासा थी ताहि।
जिहां वेसियायण तिहां, जई बोल्यो इम वाय ॥५६॥

॥ चौपाई ॥

स्यूं तूं मुनि तपस्वी के कोई, तथा तत्व नो जाण सु होई। स्यूं तूं यती कदाग्रही कहियो, के तूं जूं नूं सिय्यात्तरीयो ॥५७॥ वेसियायण तपस्वी तिहवारं, तुझ वच आदर न दियो लिगारं। मन में पिण भलो न जाणे, रह्यो मून धरी तिह टाणे ॥५८॥ अहो गोशाला तूं तब हेर, तिण बाल तपस्वी प्रतेज फेर। तूं मुनि के जाव जूं सेया तरियो, इम बे त्रण वार उच्चरियो ॥५९॥ तब बाल तपस्वी शीघ्र कोप्यो, जाव पाछो ऊसर चित्त रोप्यो। तुझ हणवा तेजू सूं केह, तब हूं तुझ अनुकम्पा अर्थेह ॥ ६० ॥ तिणरो उष्ण तेजू हणवा ज्हाल, सूं की शीतल तेजू अन्तराल। तब बाल तपस्वी चित्त ठाणी, उष्ण तेजू हणाणी जाणी ॥ ६१ ॥ मोड तुझ तनु नवि देखेह। उष्ण तेजु लेश्या सहरेह। तब मुझ प्रति बोल्यो वाय, जाणया २ हे भगवन् ताहि ॥ ६२ ॥

छद्मस्थ थको छः मास में, काश्यव काल करेह।
प्रभु कहै हूं वर्ष सोल लग, गन्ध गज जिम विचरेह॥११६॥
ते मूँको तेजू तिका, पैठी तुझ तनु न्हाल।
तेह थी सप्तम निशि मझै, तूं करसी छद्मस्थ काल॥११७॥
पुर में जन कहै उभय जिन, लवे माहो मांहि वाय।
कुण सांचो भूंठो कवण, आश्चर्य ए अधिकाय॥ ११८॥
गोशालो निज स्थान जई, सप्तम निशि सुविचार।
सम्यक्त पामी आत्म निन्द, काल कियो तिहवार॥११९॥
प्रभु वेदन षट् मास सही, पछै बिजोरा पाक।
लीधे तनु प्राक्रम बध्यो, प्रभुजी होगया चाक॥१२०॥
गोयम तब बे मुनि तणी, पूछी फुन पूछेह।
अन्तेवासी आपरो, कुशिष्य गोशालक जेह॥ १२१॥
काल करी ने किहां गयो, प्रभु भाख्यो सुविशाल।
अन्तेवासी मांहरो, कुशिष्य गोशालक न्हाल॥१२२॥
श्रमण घातक छद्मस्थ थको, काल करी सुजगीस।
अच्युत् कल्पे ऊपनो, स्थिति सागर बावीस॥ १२३॥
भगवती पनरमें शतक में, छै बहुलो विस्तार।
इहां संक्षेप थकी कह्यो, गोशालक अधिकार॥ १२४॥
कही सूत्र में तिमज कह्यं, हिव तसु कहिये न्याय।
प्रभु शिष्य कियो गोशाल ने, बलि बचायो ताय॥१२५॥

तिमज सप्त पुष्प जीव चवि, एक संगली मांय।
इस्ये सप्त तिल तेह बच, मिथ्या प्रत्यक्ष दिखाय ॥७२॥
ते तिल स्थम्भ न नीपनो; सप्त पुष्प ना जीव।
चवी सप्त तिल नवि थया, इक सुँगणी में अतीव ॥७३॥
तिण अवसर हूँ गोयमा, गोशालक प्रति वाय।
बोल्यो तैं मुझ जद वचन, श्रद्धयो नहिं मन मांय ॥७४॥
प्रतीतियो नहिं रोचव्यो, एह अर्थ अवलोय।
मनमें अश्रद्धतो छतो, भूँठो थालगा मोय ॥७५॥
ए मिथ्यावादी हवो, इम मन करी विचार।
मुझ थी पाछो ऊसरी. धीरे धीरे धार ॥७६॥
जिहां तिल थभ तिहां आयने, यावत एकान्त ठाम।
न्हांख्यो ते उपाड़ ने, हे गोशालक तांम ॥७७॥
तत्खिण वादल अभ्र दिव्य. प्रगट थयो तिहवार।
अभ्र वद्दल ते शीघ्र ही, तिमहिज यावत धार ॥७८॥
तेह तिलनां स्थंभ नी. एक संगली माँहि।
तदा ऊपजा सप्त तिल, जेम कह्युं तिम ताहि ॥७९॥
हे गोशाला तेह ए, तिल नूं स्थंभ निष्पन्न।
नथी तेह अण नीपनूं. निश्चय करी सुजन्न ॥८०॥
तेह सप्त पुष्प जीव चवि, ए तिल स्थम्भ नी जाण।
एक संगली ने विषे, थया सप्त तिल आण ॥८१॥

॥ दोहा ॥

अक्षीण राग पणे करी, अङ्गीकार प्रति ख्यात ।
ते राग भाव में धर्म किम, समझो सुगण सुजात ।१३४।
वलि परिचय करी ने कह्यो, ईषत् स्नेह अनुकम्प ।
एह कार्य्य आछो हुवे, तो इह विध कीम पयम्प ॥१३५॥
अक्षीण राग पणा विषे, परिचा विषय सुजोय ।
स्नेह अनुकम्पा ने विषे, भलो कार्य किम होय ॥१३६॥
वलि अनागत दोष ना, अजाणवा थी जोय ।
अङ्गीकार कीधो कह्यो, ते दोष किसो अवलोय ॥१३७॥
ए तिल नीपजसी कह्यो, तिण दीधो तुरत उपाड़ ।
हिन्सा जीवांरी हुई, ए अवगुण अवधार ॥ १३८ ॥
वलि लब्धि फोड गोशाल नो, रक्षण कीधो ताय"।
तिण बहु मिथ्यात बधावियो, ए पिण अवगुण थाय ।१३९।
वलि तेजु लेश्या प्रते, सीखावी भगवान ।
तिण लेश्याइं मुनि हण्या, ए पिण अवगुण जान ।१४०।
वलि प्रताप ना प्रभु ने करी, तेजू लेश्य करेह ।
वेदन अति षट् मास सही, प्रत्यक्ष अवगुण एह ॥१४१॥
वलि तिल बूंटो नीपनो, एम कह्यो . भगवान ।
तत्क्षिण तिणे उपाडियो, ए पिण अवगुण जान ॥१४२॥

है गौतम गोशाल नूं, मुझ पासा थी जेह।
आत्मई करि के तसु, पडिवुं जुदो कहेह ॥८८॥

॥ वार्त्तिका ॥

आयाए पाठ नो अर्थ, वृत्तीकार आयाए पाठ ना बे अर्थ किया:— भगवन्त कहै म्हारा पासा थी आयाए कहतां आत्मई करी अपक्रम ते जुदो पडयो निसलो अथवा आयाए कहतां आदाय तेजू लेश्या नूं उपदेश ग्रहण करी नें जुदो पड़्यो।

॥ इति आयाए पाठ नूं अर्थ ॥

तिण अवसर गोशाल ते, इक मुठि उडदेह।
इक प्रसली उष्णोदकी, छट् यावत् विहरेह ॥८९॥
तिण अवसर गोशाल ते, षट् मासे अवलोय।
संक्षिप्त विस्तीर्ण तिका, तेजु लेश्यवन्त होय ॥९०॥
तिण अवसर गोशाल पै, पार्श्व नाथ ना जोय।
षट् साधू भागल हुन्ता, आवी मिलिया सोय ॥९१॥
गोशाला ने गुरू पणै, पडिवज्झ रहिता जेह।
ते साथे तिमहिज सहु, पूर्व कह्या तिम लेह ॥९२॥
यावत् ए अजिन छतो, पिण जिन शब्द उचार।
प्रकाशमान छतो ज ए, विचरै छै इहवार ॥९३॥
मोटी प्रषध ने विषै, वीर कही ए बात।
गोशालो सुण कोपियो, निज संघ प्रति ले साथ ॥९४॥
वीर समीपे आय ने, बोल्यो एहवो वाय।
भलो कहै रे काशवा, आछो कहै रे ताहि ॥९५॥

प्रभु कह्यो अन्तेवासी मुझ, कुशिष्य गोशाल जगीस ।
अच्युतकल्पे ऊपनो, स्थित सागर बावीस ॥१५३॥
नवमें शतके भगवती, तेतीसम उद्देश ।
गौतम पूछ्यो वीर प्रति, सांभल जो सुविशेष ॥१५४॥
अन्तेवासी कुशिष्य तुझ, जमाली अणगार ।
काल करी किहां ऊपनो, प्रभु आखे तिणवार ॥१५५॥
अन्तेवासी कुशिष्य मुझ, जमाली अणगार ।
लन्तक कल्पे ऊपनो, किल्विष पणे विचार ॥१५६॥
जमाली ने कुशिष्य कह्यं, तिमहिज कुशिष्य गोशाल ।
ते माटे बिहुं शिष्य हुन्ता, देखो नयण निहाल ॥१५७॥
अन्तेवासी बिहुं भणी, आख्या श्री जगनाथ ।
वलि कुशिष्य बिहुं ने कह्या, देखो तज पखपात ॥१५८॥
कुपूत कहिवे पूत धुर, तिणहिज रीत पिछाण ।
कुशिष्य कहिवे शिष्य धुर, समझो चतुर सुजाण ।१५९।
अङ्गीकृत आख्यो प्रथम, श्रवानुभूति ख्यात ।
कह्यो सुनक्षत्र मुनि वलि, फुन प्रभु कह्यो विख्यात।१६०।
तास कुशिष्य कह्यो वलि, ए पञ्च ठाम पहिछान ।
दीक्षा गोशाला तणी, देखोजी बुद्धिवान ॥१६१॥
नवमें ठाणे वृत्ति में, जिन छद्मस्थ सुजोय ।
दीक्षा न दिये इम कह्यो, शिष्य वर्ग ने सोय ॥१६२॥

वलि भगवन्त बहु श्रुत कियो, भगवन्त थकी ज सोय।
भाव अनार्य पडिवज्झियो, ते माटे अवलोय ॥१०६॥
मति हूम है गोशाल तुझ, करण योग्य नहिं एह।
तेहिज छाया ताहरी, नहीं अनेरी जेह ॥१०७॥
सुण गोशालो कोपियो, तेजु लेश कारि ताम।
श्रवानु भूति मुनि प्रते, भस्म कियो तिण ठाम ॥१०८॥
द्वितीय वार गोशाल फुन, कठिन वचन अधिकाय।
नष्ट विणष्टादिक कह्या, तब सुनक्षत्र मुनिराय ॥१०९॥
जिम श्रवानुभूति कह्यो, तिमहिज कह्यो विचार।
गोशालो तब तेज कारि, परितापे तिहवार ॥११०॥
प्रभु पै आवी वन्दि नम, महाव्रत प्रति आरोप।
सन्त सत्यां ने खांम ने, कीधो काल अकोप ॥१११॥
तृतीय वार गोशाल फुन, प्रभु प्रति निठुर वदेह।
तब प्रभु गोशाला प्रते, मुनि कह्यो तिमज कहेह ॥११२॥
हे गोशाला तो भणी, मैं प्रवर्ज्या दीध।
यावत मैं बहु श्रुति कियो, म्लेच्छ भाव ते कीध ॥११३॥
गोशालो सुण कोपियो, तनु थी काढै तेज।
प्रभु तनु परितापे तदा, पिण तनु नहिं पेसेज ॥११४॥
गोशाला रा तनु विषै. पाछो पैठो आय।
लागी दाह शरीर में, बोल्यो प्रभु प्रति वाय ॥११५॥

भावे स्नेह अनुकम्प कहो, भावे मोह अनुकम्प ।
श्री जिन आज्ञा बार है, सावद्य तेह प्रपञ्च ॥१७०॥
मोह कर्म ना उदय थी, स्नेह राग ए होय ।
तिण सु' स्नेह अनुकम्प ते, मोह अनुकम्पा जोय ।१७१।
स्नेह किण सुं करिवो नहिं, भाख्यो श्री जिनराय ।
उत्तराध्ययने आठमें, दूजी गाथा मांय ॥१७२॥
ईषत् स्नेह अनुकम्प कही, ते अनुकम्पा सोय ।
सावद्य पाप सहित छै, अथवा निर्वद्य जोय ॥१७३॥
जो निर्वद्य अनुकम्प ए, तो ईषत् क्यु' ख्यात ।
पूरण कृपा करि प्रभु, तुम कहता अवदात ।।१७४।।
ईषत् स्नेह अनुकम्प ए, जो सावद्य छै सोय ।
तो सावद्य में धर्म नहीं, हिये विमासी जोय ॥१७५॥
ईषत् लोभ भलो नहीं, ईषत् भलो न मान ।
ईषत् माया नहीं भली. तिम ईषत् स्नेह जान ॥१७६॥
ईषत् झूठ भलो नहीं, ईषत् भलो न क्रुद्ध ।
ईषत् अदत्त भलो नहीं, तिम ईषत् स्नेह अशुद्ध ॥१७७॥
गौतम ने जिन स्नेह थी, अटक्यो केवल ज्ञान ।
तो गोशाला रा स्नेह थी, धर्म पुण्य किम जान ॥१७८॥
काल अनागत दोष पिण. इत्तिकार आख्यात ।
तो प्रशंसवा योग्य ए, कार्य्य किम कहात ॥१७९॥

गोशाला नी वारता, प्रभुजी धुर सूं ख्यात।
मास २ तप द्वितीय वर्ष, म्हे कीधो सुविख्यात ॥१२६॥
प्रथम मास ने पारणै, विजय तणे घर कीद्ध।
गोशालो कह्यो आप गुरु, हूं तुम शिष्य प्रसिद्ध ॥१२७॥
तसु अङ्गीकार मैं नविं कियो, द्वितीय मास ने जाण।
पारण गोशाले कह्युं, तिणहिज रीत पिछाण ॥१२८॥
अङ्गीकार न कियो तदा, तृतीय मास रै जेह।
पारण फुन गोशाल कह्युं; पिण मैं अङ्गीकृत न करेह।१२६।
जो शिष्य करवानी रीत हुवे, तो प्रथम बार ही पेख।
अङ्गीकार करता प्रभु, न्याय विचारी देख ॥१३०॥
तूर्य मास ने पारणे, तिमज कह्युं गोशाल।
मुझ धर्माचार्य तुम्हे, हूं धर्म अन्तेवासी म्हाल ॥१३१॥
मैं अङ्गीकार कीधो तसु. इम कह्यो सूत्र विषेह।
वृत्तिकार एहवो कह्युं, सांभलजो चित्त देह ॥१३२॥

॥ गीतक छन्द ॥

अक्षीण राग पणा थकी, परिचय करी ने जानियं।
ईषत् स्नेह अनुकम्पना, सद्भाव थी पहिछानिय॥
छद्मा : अनागत. दोष ना, अजाणवा थी आदृत।
फुन अवश्य भावी भावथीज, अजोग प्रति अङ्गीकृतं॥

इहां सराग पणो कह्यो, ते सराग पणारे मांय।
धर्म पुण्य क्रिया विध हुवे, देख विचारो न्याय ॥१९०॥
सराग पणो कहि ने पछे, दया एक रस ख्यात।
जिसो सराग पणो हुवे, तिसी दया ए थात ॥१९१॥
सराग भाव निर्वद्य नहीं, तिम दया न निर्वद्य एह।
दोनूं सावद्य जाणवा, न्याय विचारी लेह ॥१९२॥
बे साधु नवि राखिया, ते वीतराग भावेह।
दयावन्त पिण जद हुन्ता, पिण सावद्य दया न तेह ॥१९३॥
वीतराग थयां पछे, भाव सराग न होय।
तिम वीतराग थयां पछे, सावद्य दया न कोय ॥१९४॥
कोई कहे सावद्य दया, किहां कही छे ताम।
न्याय कहूं छूं तेहनो, सुण राखो चित्त ठाम ॥१९५॥
हेमि नाम माला विषे, आठ दया रा नाम।
दया शूक कारुण्य फुन, करुणा घृणा जु ताम ॥१९६॥
कृपा अने अनुकम्प फुन, वलि अनुक्रोश कहाय।
नाम एकार्थ आठ ए, तृतीय काण्ड रै मांय ॥१९७॥

॥ अथ हेमिनाम माला में आठ दया रा नाम कह्यो ते लिखिये छै ॥

सूरतोय दयाशुकः कारुण्यं करुणा घृणा कृपानु कम्पानु क्रोशो ॥इति॥

जिन रूष स्हामो जोवियो, रत्तन द्वीप नी जेण।
देवी नी करुणा करी, ज्ञाता नवम् अध्ययन ॥१९८॥

एम अनागत दोष ना, अजाणवा थी न्हाल।
प्रभु छद्मस्थ पणे कियो, अङ्गीकृत गोशाल ॥ १४३ ॥
जो ए अवगुण जाणता, तो किम करै अङ्गीकार।
पिण उपयोग दियो नहीं, वारू न्याय विचार ॥१४४॥
जो अपर अनागत दोष हुवै, तो कहिये तसु नाम।
प्रगट वृत्ति में आखियो, दोष अनागत ताम ॥ १४५ ॥
कोई कहै गोशाल ने, अङ्गीकार कृत ख्यात।
पिण दीक्षा दीधी हुसो, किहां पाठ अवदात ॥१४६॥
अवानु भूत्ति मुनि कह्यो, है गोशाला तोय।
प्रवर्ज्या दीधी प्रभु, वलि प्रभु मूंड्यो सोय ॥१४७॥
वृत्ति पणे सिव्यो प्रभु, सीखायो भगवान।
वलि वहु स्रुति प्रभु कियो, प्रगट पाठ पहिछान ॥१४८॥
इमज सुनक्षत्र मुनि कह्यो, इम प्रभु कह्यो प्रसिद्ध।
है गोशाला तो भणी, म्हे ज प्रवर्ज्या दीध ॥१४९॥
यावत् में बहु स्रुत कियो, मुझ सेती इहवार।
भाव अनार्य्य पडिवज्यो, इम आख्यो जगतार ॥१५०॥
तव गोशाले जिन ऊपरै, मूंकी तेजू लेश।
प्रभु षट् मास लगे सह्यो, वेदन अधिक विशेष ॥१५१॥
जो षट् मास थयां पछै, प्रभु तनु थयो निराम।
गौतम पूछ्यो कुशिष्य तुझ, मर उपनो किण ठाम ।१५२।

तिण सूँ तेजु लब्धि प्रति, फोड़ी ने भगवान।
गोशाला ने राखियो, छद्मस्थ थकां पिछाण ॥२०६॥
केवल ज्ञान थयां पछै, लब्धि फोडवणो नाहिं।
बहु ठामे वर्जी प्रभु, देखो सूत्र मांहि ॥२१०॥
पद छत्तीसम पन्नवणा, वैक्रिय लब्धिज ताय।
फोड्यां क्रिया जघन्य त्रण, उत्कृष्ट पञ्च ही थाय ॥२११॥
इमहिज आहारिक लब्धि प्रति, फोड्यां थी पहिछान।
जघन्य तीन क्रिया कही, उत्कृष्ट पञ्च सुजान ॥२१२॥
इमहिज तेजू लब्धि प्रति, फोडै तेह ने जोय।
जघन्य तीन क्रिया कही, उत्कृष्ट पञ्च ज होय ॥२१३॥
तेजु लब्धि जे फोडवी, प्रभु छद्मस्थ पणेह।
केवल लह्यां क्रिया कही, वैक्रिय नी परै एह ॥२१४॥
सराग भाव करि कार्य कृत, तास स्थाप स्युं होय।
केवल लह्यां पछै कह्यो, ताम स्थाप छै सोय ॥२१५॥
कोई कहै अनुकम्प करि, प्रभु राख्यो गोशाल।
ते माटै इहां धर्म छै, उत्तर तास निहाल ॥२१६॥
वृद्ध तणो अनुकम्प करि, कृष्णे ईंट उपाड़।
तास घरे मेली कही, अन्तगडे अधिकार ॥२१७॥
सुलसां नी अनुकम्प करि, पुत्र देवकी नां ज।
मूंक्या हरण गवेषि सुर, सूत्र अन्तगड साज ॥२१८॥

॥ अथ ठाणांग नवमें ठाणे टीका में कह्यो छै तीर्थंकर छद्मस्थ थका दीक्षा न दियै ते गाथा लिखिए छै ॥

न परोवए सिया नय, छउमत्था परोवए।
संपि दिविनय सीस वग्गां, दिक्खन्ति जिणा जहासव्वे ॥
केवल उपजिया बिना, दीक्षा दीधी आम।
अक्षीण राग पणे करी, परिचय स्नेह प्रताप ॥१६३॥
वलि अजाण पणा थकी, जेह अनागत दोष।
वृत्तिकार पिण इम कह्यो, तो मुझ थी क्यूं अपसोस ॥
अयोग नै अङ्गीकार कृत, एम कह्युं वृत्तिकार।
जे दीक्षा देवा योग्य नहीं, तेह अयोग विचार ॥१६५॥
अक्षीण राग पणे कह्यो, ते राग भाव रै मांहि।
आणां केवली नी अछे, अथवा आज्ञा नाहिं ॥१६६॥
वलि परिचय करि नै कह्यो, ते परिचय पहिछान।
आछो छै अथवा बुरो, न्याय विचार सुजान ॥१६७॥
ईषत् स्नेह गर्भानुकम्प, सभाव थी अवलोय।
अङ्गीकृत कह्युं वृत्ति में, तास न्याय हिव जोय ॥१६८॥
जे अनुकम्पा नै विषै, स्नेह रह्यो छै ताय।
स्नेह गर्भ अनुकम्प ते, मोह अनुकम्प कहाय ॥१६९

भगवती गौतम गुण मझै ,तेजु लेश्या प्रति ताहि ।
संकोचे ते गुण कह्यो, फोड्यां गुण कह्यो नाहिं ॥२२९॥
इत्यादिक बहु सूत्र में, तेजू वैक्रिय आदि ।
मुनि ने लब्धि न फोडणी, देखो वर अहह्लाद ॥२३०॥
जो लब्धि फोड गोशाल ने, राख्यां धर्मज होय ।
तो बे मुनि प्रति राख्या न क्यूं, न्याय विचारी जोय ॥२३१॥
जब कहै बे मुनिवर तणो, मृत्यु जाण भगवान ।
तिण कारण राख्या नहीं, हिव तसु उत्तर जाण ॥२३२॥
वृत्तिकार तो इम कह्यो, वीतराग भावेह ।
लब्धि अण फोड्यां थकी, वलि अवश्य भावी छै एह ॥२३३॥
शीतल तेजू लब्धि प्रति, अण फोड़वा थी ख्यात ।
तिण सुं शीतल तेजु पिण, किम फोडे जगनाथ ॥२३४॥
ज्यो प्रभु बे मुनिवर तणो, जाण्यो मृत्यु जिंवार ।
तो मुनि गौतम आदि त्यां, क्युं नहिं कीधी सार ॥२३५॥
गौतम आदि विषे हुन्ती, शीतल तेजू लेश ।
त्यां लब्धि फोड राख्या न क्युं, बे मुनि प्रति सुविशेष ॥
जब कहै गौतम आदि प्रते, वर्ज्या प्रभुजी ताय ।
तिण सुं मुनि राख्या न बे, निसुणो तेहनो न्याय ॥२३७॥
प्रभु तो आनन्द ने कह्यो, तू मुनि प्रते कहेह ।
धर्म प्रति चोयण मत करो, गोशालक थी जेह ॥२३८॥

होणहार निश्चय तिको. टाल्यो नहीं टलन्त।
तिण कारण गोशाल ने, दीक्षा दी भगवन्त ॥१८०॥
वृत्तिकार पिण इम कह्यो, तुम ने पिण तिण रीत।
कहिवुं तेहिज उचित छै, वारूं बचन वदीत ॥१८१॥
कोई कहै ए वृत्ति ने, तुम्हे न मानो कोय।
तो बात वृत्ति नी किम कहो, हिव उत्तर अवलोय ॥१८२॥
भगवती शतक अठारमें, प्रभुजी भणी प्रत्यक्ष।
सोमिल प्रश्नज पूछिया, शरसव भक्ष अभक्ष ॥१८३॥
जिन कह्यो जे ब्राह्मण तणा, शास्त्र विषे आख्यात।
शरसव ना बे भेद है, इत्यादिक अवदात ॥१८४॥
तो ब्राह्मण-ना शस्त्र प्रते, स्युं मान्युं जगनाथ।
पिण तेहने समझायवा, तसु मतनी कही बात ॥१८५॥
तिम मिलती ए वार्त्ता, वृत्ति तणी आख्यात।
जे वृत्ति माने तेहने, समझावा कही बात ॥१८६॥
वलि प्रभु गोशाला तणी, अनुकम्पा चित्त ल्याय।
शीतल तेजू फोड़वी, रक्षण कीधो ताय ॥१८७॥
वृत्तिकार इम आखियो, तेह सराग पणेह।
एक दया ने रस थकी, रक्षण कीधो एह ॥१८८॥
बे मुनि ने न बचावसी, तब वीतराग भावेह।
लब्धि अण फोड़वा थकी, अवश्य भावी एह ॥१८९॥

छेदे हरश मुनि तणी, क्रिया वैद्य ने ख्यात।
शतक सोलमें भगवती, तृतीय उद्देश सञ्जात ॥२४९॥
आज्ञा श्री जिनवर तणी, जेह कार्य में नांय।
तेह कार्य कीधां छतां, धर्म पुण्य किम थाय ॥२५०॥
तिमज लब्धि फोड़ण तणी, श्री जिन आण न देह।
धर्म पुण्य किम तेह में, न्याय विचारो एह ॥२५१॥
कोई कहे छद्मस्थ प्रभु, फोड़ी लब्धि जिंवार।
दण्ड लियो स्युं तेहनो, हिव तसु उत्तर सार ॥२५२॥
राजमती ने बोलियो, विषय बचन रहनेम।
प्रायश्चित्त चाल्यो न तसु, पिण लियो हुस्ये धर पेम ॥२५३॥
जल बिच पाती नाव जिम, आद्रमुते ऋषि कीध।
प्रायश्चित्त चाल्यो न तसु, पिण लीधो हुस्ये प्रसिद्ध ॥२५४॥
मोह वशे सीहो मुनी, रोयो मोटे साद।
प्रायश्चित्त चाल्यो न तसु, पिण लीधो हुस्ये संवाद ॥२५५॥
धर्म घोष ना सन्त जे, आवी चोहटा मांहि।
नाग श्री हेली निन्दी, तसु दण्ड चाल्यो नांहि ॥२५६॥
हणसि हय नृप सारथी, नाम सुमङ्गल सन्त।
प्रायश्चित्त चाल्यो न तसु, शतक पनरम् उदन्त ॥२५७॥
कोई कहे आलोयणा, पडिक्कमणा कही तास।
तिण सुं ए दण्ड तेहनुं, हिव उत्तर सुविमास ॥२५८॥

करुणा नाम दया तणो, ते माटै सुविचार।
एह दया सावद्य छे, श्री जिन आज्ञा बार ॥१९९॥
उत्तराध्ययन बावीस में, नेमनाथ भगवान।
जीव देख अनुक्रोश मन, पाठ विषे पहिछान ॥२००॥
अनुक्रोश ते करुणा कही, अविचूरि में अर्थ।
ते माटै करुणा दया, निर्वद्य एह तदर्थ ॥२०१॥
तिण सूं भाव सराग नी, दया ज सावद्य सोय।
अष्टादश में देखलो, दशमूं राग सुजोय ॥२०२॥
लब्धि अणफोड़ववा थकी, वीतराग भावेह।
बे साधु नवि राखस्ये, ए पिण हत्ति विषेह ॥२०३॥
तिण सूँ सराग भाव करि, शीतल तेजू लेश।
लब्धि फोड़वी राखियो, गोशालक सुविशेष ॥२०४॥
गोशालक हणवा भणी, बाल तपस्वी जेह।
उष्ण तेजु लेश्या प्रते, मूंकी पाठ विषेह ॥२०५॥
भगवन्त अनुकम्पा करी, लेश्या शीतल तेह।
मूंकी गोशालक भणी, रक्षण करण कहेह ॥२०६॥
उष्ण तेजु लेश्या कही, शीतल तेज ही लेश।
तेजु लेश ए बिहुं कही, पाठ विषै सुविशेष ॥२०७॥
उष्ण तेज लेश्या प्रते, तापस मूंकी सोय।
लेश्या शीतल तेज प्रति, प्रभू मूंकी अवलोय ॥२०८॥

छट्ठा गुणठाणा विषै, आखी च्यार कषाय।
षट् लेश्यां संज्ञा चिहुं, अशुभ जोग पिण थाय ॥२६९॥
परिचय स्नेह अनुकम्प करि, अक्षीण राग पणेह।
सराग भाव फुन लब्धि नूं. फोडववुं पिण लेह ॥२७०॥
प्रथम छट्ठा गुणठाण ना, प्रगट भाव ए पेख।
निर्वद्य किम कहिये तसु, न्याय विचारी देख ॥२७१॥
जेह कार्य नी केवली, आज्ञा न दिये कोय।
धर्म पुण्य नहिं तेह में, हिये विमासी जोय ॥२७२॥
जेह कार्य नी केवली, आज्ञा देवै आप।
धर्म पुण्य छै तेह में, तिहां नहिं किञ्चित पाप ॥२७३॥
केई जिन आज्ञा में पाप कहै, धर्म जिन आज्ञा बार।
बिहुं विध अशुद्ध प्ररूपवै, किम पामै भव पार ॥२७४॥
जिन धर्म जिन आज्ञा दिये, जिन धर्म सिखावै आप।
जे धर्म कहै आज्ञा बिना, ते कांवण प्ररूप्यो थाप ॥२७५॥
आज्ञा बारै धर्म रो, कांवण धणी अवलोय।
हाथ जोडि पूछ्यां थकां, कुण आज्ञा दे सोय ॥२७६॥
देव गुरु तो मौन रहै, नहिं अनुमोदै अंश मात।
तो आज्ञा बाहिर धर्म री, उत्पति रो कुण नाथ ॥२७७॥
संवर नै वलि निरजरा, दोय प्रकारे धर्म।
जिन आज्ञा में ए बिहुं, ते थी शिवसुख पर्म ॥२७८॥

पथ्य धारणी भोगव्यो, गर्भ अनुकम्पा आण।
अभय अनुकम्पा सुर करी, दोहलो पूर्यो जाण ॥२१९॥
हरकेशी मुनिवर तणी, अनुकम्पा करि यक्ष।
रुधिर वमन्ता छात्र कृत, उत्तराध्ययन प्रत्यक्ष ॥२२०॥
वलि मुनि नी व्यावच अर्थ, छात्रां ने दुःख देह।
ए पिण सावद्य जाणवी, तिम अनुकम्प कहेह ॥२२१॥
अनुकम्पा त्रस जीवनी, आणी ने मुनिराय।
बांधे बांधतां प्रति, अनुमोद्यां दण्ड आय ॥२२२॥
इमहिज छोड़े छोड़तां प्रति, मुनि जे अनुमोदेह।
निशीथ उद्देशे बारमें, दण्ड चौमासी कहेह ॥२२३॥
अनुकम्पा ए सहु कही, पाठ विषे पहिछाण।
जिन आज्ञा नहिं तेह मे, तिण सुं सावद्य जाण ॥२२४॥
तिम प्रभु गोशाला तणी, अनुकम्पा चित आण।
तेजू लब्धिज फोडवी, तिण सुं सावद्य जाण ॥२२५॥
आहारिक लब्धि फोडवे, अधिकरण कह्यो तास।
शतक सोलमें भगवती, प्रथम उद्देश विमास ॥२२६॥
वैक्रिय लब्धि फोडवे, कह्यो विराधक ताहि।
भगवती तीजे शतक में, तूर्य उद्देशा मांहि ॥२२७॥
जङ्घा विद्या चारण, लब्धि फोडवी जाय।
ते थानक विन पडिकम्यां, कह्या विराधक ताय ॥२२८॥

गुणवन्त री निन्दा कियां, कर्म तणुं बन्ध होय।
तेह कर्म थी दुःख लहै, नरक निगोदे सोय ॥२८८॥
तिण सुं हित शिक्षा भली, धारै सुगण सुजाण।
राग द्वेष छांडी करी, आराधै जिन आण ॥२८९॥

॥ कलश ॥

॥ चाल गीतक छन्द ॥

जिन वयण गुण मणी रयण सार उदार देखी संग्रह्या, अवि तथ्य पथ्य सु अर्थ जे मुझ भ्यामना में जिम कह्या। अति श्रेष्ट मिष्ट गरिष्ट प्रवर विशिष्ट जिन वच आद्यतं॥ वच विरुद्ध जो आयो हुवे मुझ तास मिथ्या दुःकृतं ॥ १ ॥ उगणीसे तेतीस वर्ष विद द्वादशी फागुण वही, वर शहर बीदासर विषे इद श्रमण एकावन सही। फुन अर्जं का इकशय तिहां गणी आण सम्प्रति शोभती। वर समय सार उदार निर्णय कीध जय जश गणपती ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

भिक्षु भारीमाल फुन, तृतीय पाट ऋषिराय।
तास पसाए सुगण वृद्धि, जय जश हर्ष सवाय ॥ १ ॥

पिण मुनि प्रते न बचावणा, इम तो आख्यो नांय।
तिण सुं गौतम आदि जे, मुनि नहीं राख्या कांय ॥२३९॥
पिण जे लब्धि फोडण तणी, श्रीजिन आज्ञा नांय।
तिण सुं शीतल तेजु प्रति, किम फोडै मुनिराय ॥२४०॥
लब्धि फोड़ गोशाल ने, राख्यो श्री भगवान।
जद छद्मस्थ पणे हुन्ता, मोह स्नेह वश जान ॥२४१॥
जल थी नाव भरी जती, देखी ने मुनिराय।
गृही प्रते बतावणो नहीं, द्वितीय आचारङ्ग मांय ॥२४२॥
डूबे आप अने वली, जे डूबे बहु जीव।
तसु अनुकम्प करै नहीं, रहै समभाव अतीव ॥२४३॥
मात बचावा ऊठियो, चूलणि पिया पिछाण।
तसु पोषह भागो कह्यो, सप्तम अङ्गे जाण ॥२४४॥
मिथिला बलती देख नमि, स्हामों जोयो नाहिं।
देखो उत्तराध्ययन मे, नवमें अध्ययने ताहि ॥२४५॥
दशवैकालिक सातमें, देव मनुष तिर्यञ्च।
विग्रह लडता परस्पर, देखी ने मुनि सञ्च ॥२४६॥
एहनी होवे जीत पुन, एहनी होवें हार।
एहवु न कहै महा मुनी, हिव तसु न्याय विचार ॥२४७॥
हार जीत नवि वञ्छवी, तो तास विचे पड़ सन्त।
कीम करावे हार जय, देखोजी मति मन्त ॥२४८॥

उत्तराध्ययन इकवीस में, समुद्रपाल सम्वेग।
पायो तस्कर देखने, देखो तज उद्वेग ॥ ५ ॥
सम्वेग पाठ तणो अर्थ, अविचूरि में ख्यात।
सम्वेग ना हेतु भणी, सम्वेग चोर कहात ॥ ६ ॥

॥ सूत्र गाथा ॥

तं पसि ऊणं सम्वेगं, समुद्दपालो इण मव्वी, अहो असुहाण कम्माणं, निज्झाणं पावगं इमं ॥ उत्तराध्ययन २१ वें गाथा ९ मीं ॥

॥ अत्र अविचूरी ॥

तमिति तथा विध द्रव्यं दृष्ट्वा संवेग संसार वैमुख्यतो मुक्त्य ऽभिलापस्तद्धे तुत्वात्सोपि संवेगस्तं समुद्रपाल इदं वक्षमाणं अब्रवीत् यथा अशुभानाँ पापकानाँ कर्म्मणा मनुष्टानानां निर्यानं अवसानं पापकं अशुभं इदं प्रत्यक्ष असौवराको वद्धार्थ मित्यंनीथ ते इति भावः।

॥ वार्त्तिका ॥

इहाँ कह्यो तं कहताँ ते, तथा विध द्रव्य देखी ने सम्वेग ते संसार विमुखपणो मुक्तिनी अभिलाषा ते सम्वेग नाँ हेतु पणा थकी, सोपि कहताँ तिको चोर पिण सम्वेग, जिम पापकारो कर्म्म ते अनुष्टान ना छेहड़े अशुभ ए प्रत्यक्ष राँक वध ने अर्थे इह विध लेजाय छे, एतले सम्वेग नो हेतु चोर ते देखी ने समुद्रपाल बोल्यो अशुभ कर्म्म ना फल ए भोगवै छे।

॥ दोहा ॥

सम्वेग नो हेतु कह्यो, तसकर ने अवलोय।
पिण गुण नहिं छे ते भणी, वन्दन योग न कोय ॥ ७ ॥

चर्म समय नूं पाठ ए, खन्धक धन्नो आदि।
बहु मुनि नो समुच्चय कह्यो, तिम ए पिण संवाद ॥२५६॥
जंघा विद्या चारणा, तस्स ठाणस्स सोय।
आलोइय पडिक्कमिय, एहवो पाठ सुजोय ॥२६०॥
लब्धि फोड़ी ते स्थान प्रति, आलोवी गुणवन्त।
वलि पडिक्कमे ते मुनी, पद आराधक हुन्त ॥२६१॥
मुनी सुमङ्गल स्थान की, तस्स ठाणस्स नांहि।
तिण सुं लब्धि फोड़ण तणो, दण्ड कह्यो नहिं ताहि ॥२६२॥
पिण नृप हय अरु सारथी, हणसे दण्डज तास।
तेह मुनी लिस्ये सही, कह्यु सव्वठ सिद्ध वास ॥२६३॥
इत्यादिक बहु ठाम ही, प्रायश्चित्त चाल्या नांहि।
पिण लिया हुस्ये महा मुनी, गुणी देखोजी दिल मांहि ।२६४
तेजु लब्धि जे फोड़वे, तास क्रिया लण पञ्च।
केवल लह्यां कह्यो प्रभु, तिण सुं दण्ड सुसञ्च ॥२६५॥
कल्पातीत हुन्ता प्रभू, छै ए सांची वाण।
पिण किण गुणठाणे तिकै, कहिये चतुर सुजाण ॥२६६॥
प्रभुजी चरित्त लियां पछी, श्रेणी चढ्या महलांज।
सप्तम गुण छट्ठै वली, वे गुणठाण समाज ॥२६७॥
सप्तम गुणठाणा तणी, उत्कृष्टी अवलोय।
अन्तर महुरत स्थिति छै, छट्ठै बहु स्थित जोय ॥२६८॥

द्वेष तणा हेतु प्रभु, पिण ते गुणा सहीत ।
तिण सुं ते निन्दनीक नहिं, देखोजी धर प्रीत ॥१८॥
वस्तु जे गुण सहित प्रति, देखी द्वेष लहेह ।
द्वेष तणो हेतु तिका, पिण निन्दनीक नहिं जेह ।१६।
वस्तु जे गुण हीण प्रति, देखि संवेग लहेह ।
संवेग नो हेतु तिका, पिण वन्दनीक नहिं तेह ॥२०॥

॥ अथ सत्तावीसम् ब्राह्मी लिपि अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै अङ्ग पञ्चमें, ब्राह्मी नी लिपि सार ।
नमस्कार तेहने कह्यु, हिव तसु उत्तर धार ॥ १ ॥
नमो बंभीए लिवी ए, लिपि कर्त्ता नामेय ।
चरण सहित जिन धुलिपिक, अर्थ धर्मसी एह ॥ २ ॥
गाथा ना कर्त्ता भणी, गाथो कहिए ताहि ।
एवं भूत नयने मते, अनुयोग द्वार रै मांहि ॥ ३ ॥
अथवा लिपि जे भाव लिपि, जे मुनि ने आधार ।
नमस्कार छै तेहने, एहवुं दीसे सार ॥ ४ ॥
तीर्थ नाम जिम सूत्र नूं, ते संघ ने आधार ।
तिण सुं सङ्घ ने तीर्थ कह्युं, तिम भावे लिपि सार ॥ ५ ॥

दोय प्रकारे धर्म बलि, श्रुत पुन चरित पिछाण।
जिन आज्ञा ए बिहुं विषे, समझो सुगण सुजाण ।२७९।
पञ्च महाव्रत साधुरा, श्रावक ना व्रत बार।
जिन आज्ञा में ए बिहुं, आज्ञा बार असार ॥२८०॥
तिण सुं जिन आज्ञा तणी, राखो सुगण प्रतीत।
धर्म जिन आज्ञा धारियो, ते गया जमारो जीत ॥२८१॥

॥ अथ हित शिक्षा ॥

दुःख बहु नरक निगोद ना, सह्या अनन्ती बार।
धर्म जिन आज्ञा शिर धरै, हुवे तास निस्तार ॥२८२॥
मनुष जन्म दोहिलो लह्यो, लही सामग्री सार।
पञ्च महाव्रत आदरी, आराध्यां भव पार ॥२८३॥
जो चरित धर्म ग्रही नहिं सकै, तो श्रावक ना व्रत बार।
निर अतिचारे पालियां, पामै भव दधि पार ॥२८४॥
जो बार व्रत ग्रही न सकै, तो समदृष्ट उदार।
देव गुरू धर्म ओलखां, सुख पामै श्रीकार ॥२८५॥
जो पूरी समझ पड़े नहीं, तो गुणवन्त रा गुण गाय।
कोइक रसायण आवियां, पातिक दूर पुलाय ॥२८६॥
पोते व्रत पाले नहीं, पाले ज्यासूं द्वेष।
दोय मूर्ख तिण मे कह्यो, प्रथम आचाराङ्ग देख ॥२८७॥

वेदक विकथा वारता, मन्त्र जन्त्र पुन तन्त्र।
कोक सामुद्रिक शास्त्र ए, लिपि में सहु आवन्त ॥१६॥
पाप शास्त्र गुनतीस पुन, वर्ण स्थापना पेख।
ए अठारे लिपि विषे, वन्दनीक तुझ लेख ॥१७॥
वीतराग तो तेहने, पाप शास्त्र आख्यात।
द्रव्य लिपि कहिए तेहने, वन्दनीक किम थात ॥१८॥
जो वन्दनीक द्रव्य लिपि हुवे, द्रव्य लिपि कही अठार।
तेह विषे सहु आविया, किम वन्दे अणगार ॥१९॥
तें माटे ते भाव लिपि, वा कारता नाभेय।
ऋषभ चर्ण गुणयुक्त ने, नमस्कार सुगुणेह ॥२०॥

॥ वार्त्तिका ॥

कोई कहे भगवती रे आदि में णमोबंभीए लिविए। ए शब्द कही पछे कह्यो णमो सुयस्स, ते लिपि ने नमस्कार करी सूत्र ने नमस्कार कस्यु, ते भाव श्रुत ने नमस्कार कर्यो छते ते भाव सूत्र ने विषे भावलिपी पिण आय गई तो पूर्वे भाव लिपी ने नमस्कार किधो तेहनुं स्युं कारण नमोबंभीए लिविए अनें नमो सुयस्स ए बे पद किम कह्या तेहनुं उत्तर॥ दशवैकालिक अध्ययन आठमें. गाथा ४१ मी में कह्यो कुम्मुवं अल्लिण पल्लिण गुत्तो, काछवा नी परे अल्लीण ते इषत् गुप्त पल्लिण ते प्रकृष्ट लीन घणो गुप्त इहां बे पद कह्या तथा दशवैकालिक अध्ययन चौथे कह्यो पृथिविकाय ऊपर न लिहेज्जा कहितां थोड़ोसो अथवा एक वार लिखे नही, न विलिहेज्जा कहतां बहुवार लिखे नही इहां पिण बे पद कह्या, तथा उत्तराध्ययन पहले आलवंते लवंते वा न सिएज्जा कयाइवि गुरुई, आलवंते कहतां एकवार बोलाव्यो था ते अथवा लवंते

तिण काले भिक्खू गणे, मुनिवर सित्तर दोय।
इक सह वाणु अर्जका, गणो आणा अवलोय॥ २॥
उत्तर तुम्हे मंगाविया, हमे लिखाव्या नांय।
ते माटे ए प्रश्न ना, उत्तर दोहा बणाय॥ ३॥
दोहा ग्रहस्थ कंठे करी, निज मति थकी लिखेइ।
तिके खोट ज्यो को लिखी, तो मुझ दोषण मत देह॥ ४॥

॥ इति गोशालाधिकार ॥

॥ अथ छव्वीसमूं प्रतिमा वैराग्य नो हेतु कहे तेहनुं उत्तर ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहे वैराग्य नो, हेतु प्रतिमा एह।
जिन प्रतिमा देखी करी, वर वैराग्य लहेह॥ १॥
ते माटे वन्दनीक है, निज प्रतिमा जग मांय।
हिव तेहनुं उत्तर कहूं, सांभल जो चित्तल्याय॥ २॥
वृषभ देख प्रति बूझियो, कर कंडू नरराय।
दु मुह इन्द्रध्वज स्थम्भ प्रति, देख सम्वेग सुपाय॥ ३॥
चूडि सूं प्रति बूझियो, नमि नृपति तिह काल।
अभ्र देख प्रति बूझियो, नगई नाम भूपाल॥ ४॥

वृषभादिक देखी करी, कर कछू आदेह ।
बूझण पिण वृषभादि ते, वन्दनीक न कहेह ॥ ८ ॥
मुनि वेषे जे पासत्थो, तसु देखी ने सोय ।
बेराग पावे पिण तिको, वन्दन योग न कोय ॥ ९ ॥
तिम जिन प्रतिमा देख ने, पावे जे वैराग ।
पिण ते वन्दन योग नहीं, देखो मत पक्ष त्याग ॥१०॥
ज्ञान दर्शन चारित तणा, गुण नहिं छै जे मांय ।
ते सम्वेग नो हेतु हुवै, पिण वन्दनीक नहि थाय ॥११॥
मुनिवर प्रति देखी करी, द्वेष धरै मन कोय ।
द्वेष तणो हेतु मुनी, पिण निन्दनीक नहिं होय ।१२।
अवानु भूत्ति मुनि तणा, वचन सुणी गोशाल ।
कोप्यो शीघ्र उवावलो, भस्म कियो तेह काल ॥१३॥
कोप तणो हेतु मुनी, पिण -गुण सहित सुसन्त ।
ते माटे निन्दनीक नही, देखोजो बुद्धिवन्त ॥१४॥
सुनक्षत्र ना वचन सुणि, धन्यु गोशाले द्वेष ।
द्वेष तणो हेतु तिको, पिण निन्दनीक नहिं पेख ॥१५॥
वीर प्रभूना वचन सुणि, कोप्यो शीघ्र गोशाल ।
कोप तणा हेतु प्रभू, पिण निन्दनीक मत न्हाल ॥१६॥
छद्म वीर प्रति देखि ने, जन बहु द्वेष धरेह ।
दुःख दीधा अति आकरा, आख्यो धुर अङ्गेह ॥१७॥

वृत्तिकार द्रव्य लिपि कही, तेह लिपि गुण सून्य ।
नमस्कार तेहने करेंडूं, ते तो बात जबुन्य ॥ ६ ॥
द्रव्य निक्षेपो गुण रहित, वन्दन जोग्य न ताम ।
समवायङ्गे देखल्यो, द्रव्य भाव जिन नाम ॥ ७ ॥
भरत एरवत खेत्र ना, अनागते जिन नाम ।
समचे चोवीस नाम जिन, वन्दे पाठ न ताम ॥ ८ ॥
वली एरवत खेत्र नो, चउवीसी वर्त्तमान ।
ठाम ठाम वन्दे कह्युं, ए गुन सहित सुजान ॥ ९ ॥
वर्त्तमान चउवीस ए, भरत खेत्र नी ताहि ।
ठाम ठाम वन्दे कह्यो, जोवो लोगस्स मांहि ॥१०॥
ते लेखे द्रव्य लिपि भणी, द्रव्य सूत्र ने सोय ।
नमस्कार किम कीजिये, हिये विमासी जोय ॥११॥
वृत्तिकार द्रव्य लिपि भणी, थाप्यो छै नमस्कार ।
सूत्र थकी मिलतो नथी, एह अर्थ अवधार ॥१२॥
तथा पत्र में जे लिख्या, अक्षर ना आकार ।
वन्दनीक जो ते हुवे, तो लिपि अष्टादश धार ॥१३॥
अष्टादश लिपि ने विषे, वेद पुराण संपेख ।
कुरान जोतिष पिण हुवे, वन्दनीक तुझ लेख ॥१४॥
अष्टादश लिपि ने विषे, वर्ण संज्ञा सपेख ।
सहु पुस्तक में जे लिख्या, वन्दनीक तुझ लेख ॥१५॥

कहतां वार वार बोलाव्यो नं० शिष्य बैठो रहै नही कदाचित पिण इहाँ पिण वे पद कह्या, तथा उत्तराध्ययन इग्यारमे नासीले कहितां सर्वथा चारित्र नी विराधना नथी विसीले कहतां थकी चारित्र नी विराधना नथी इहाँ पिण देश अने सर्व ए वे पद कह्या, तथा वृहत्कल्पउद्देशै तीसरै अन्तर घरने विषै साधू ने न कल्पै निद्दा इत्तएवा कहिता थोड़ी नींद लेवी पयला इत्तएवा कहितां विशेष ऊंघवो इहाँ पिण वे पद कह्या, इत्यादिक अनेक ठामें वे पद कह्या तिम इहाँ पिण वे पद जाणवा लिपि शब्दे भाव लिपि ते देश थकी श्रुत ज्ञान अने नमो सुयस्स ते सर्व श्रुत ज्ञान कह्यो तथा लिपिना करता ऋषभदेव ने लिपिक कहिए ते चारित्र युक्त प्रथम जिनने नमस्कार।

॥ अत्र टीका ॥

अयं च प्राग् वाख्याता नमस्कारादिकाग्रन्थ वृति कृत्ता न व्याख्यातो कुतोप कारणा दिति, ए भगवती नी वृत्ति में अभय देव सूरे कह्यो।

॥ सोरठा ॥

नमस्कारादिक ताहि रे. रचना पूर्व कही जिका।
सूल वृत्ति रै मांहि रे, न कही किण कारण तिका।१।
इम कह्यो वृत्तिकार रे, ते माटे हिव तेहनुं।
प्रवर न्याय जी सार रे, बुद्धिवन्त हियै विचारज्यो ॥२॥

॥ इति ॥ श्रीमद् जयाचार्य्य कृत हित शिक्षावली प्रश्नोत्तर तत्वबोध ॥

